(मासिक)

ज्ञानामृत

वर्ष 57, अंक 5, अगस्त, 2021
मूल्य 8.50 रुपये, वार्षिक शुल्क 100 रुपये

राजयोगिनी दादी प्रकाशमणि जी
14वीं पुण्यतिथि (25 अगस्त, 2021)

पोरसा- केंद्रीय ग्रामीण विकास एवं पंचायती राजमंत्री भ्राता नरेंद्र सिंह तोमर को शॉल ओढ़ाकर सम्मानित करते हुए ब्र.कु. कृष्णा बहन। साथ में ब्र.कु. निकेता बहन तथा अन्य।

बतौली (अंबिकापुर)- उप सेवाकेंद्र के नवनिर्मित सभागार का उद्घाटन फीता काटकर करते हुए छत्तीसगढ़ के खाद्य एवं संस्कृति मंत्री भ्राता अमरजीत सिंह भगत, ब्र.कु. विद्या बहन तथा अन्य।

भरतपुर- मातेश्वरी जगदम्बा के 56वें पुण्य स्मरण दिवस पर महाराजा सूरजमल ब्रज विश्वविद्यालय के उपकुलपति प्रो.राजेश धाकरे, कृषि क्षेत्र के संयुक्त निदेशक डॉ. देशराज सिंह, ब्र. कु. कविता बहन, ब्र. कु. बबिता बहन, ब्र. कु. जुगल किशोर भाई तथा ब्र. कु. गीता बहन श्रद्धा सुमन अर्पित करते हुए।

केशोद- अंतर्राष्ट्रीय योग दिवस पर आयोजित कार्यक्रम का शुभारंभ करने के बाद शिबवावा की याद में उपस्थित हैं विधायक देवाभाई मालम, नगरपालिका प्रमुख भगिनी लाभु पिपलिया, शहर भाजप प्रमुख प्रवीण भाई भालारा, ब्र.कु. रूपा बहन तथा अन्य।

रीवा- अंतर्राष्ट्रीय नशा मुक्ति दिवस पर आयोजित कार्यक्रम में संबोधित करते हुए विधायक भ्राता राजेंद्र शुक्ला। मंचासीन हैं रेड क्रॉस सोसाइटी के उपाध्यक्ष हाजी ए.के. खान, युवा शायर भ्राता सिद्धार्थ श्रीवास्तव, ब्र.कु. निर्मला बहन तथा ब्र.कु. प्रकाश भाई।

जयपुर (राजापार्क)- अंतर्राष्ट्रीय योग दिवस कार्यक्रम में मंचासीन हैं आयुर्वेदिक यूनिवर्सिटी के अध्यक्ष डॉ. अंकित सिंह, ब्र.कु. पूनम बहन, पदमश्री बहन कृष्णा पूनिया तथा सामाजिक कार्यकर्ता बहन पूनम राठौड़।

जन्माष्टमी पर विशेष –

संजय की कलम से

श्री कृष्ण का आह्वान

आज लोग अपने संस्कारों को नहीं बदलते और जीवन को पवित्र नहीं बनाते, श्री कृष्ण का केवल आह्वान मात्र कर छोड़ते हैं, परन्तु सोचने की बात है कि क्या श्री कृष्ण आज के वातावरण में जन्म ले सकते हैं? आज तो संसार में तमोगुण की प्रधानता है और सभी में काम, क्रोध, लोभ, मोह तथा अहंकार का प्राबल्य है, मानो सभी शूद्र हैं। ऐसे लोगों के बीच क्या श्री कृष्ण पधार सकते हैं?

हम देखते हैं कि श्री कृष्ण के मन्दिरों में हर प्रकार से स्वच्छता बरती जाती है, शुद्ध भोजन का भोग लगाया जाता है और लोग अशुद्ध संकल्पों एवं व्यवहारों से तथा विकारों से भी बचकर रहते हैं। फिर, मन्दिर में धूप-दीप जगाकर वातावरण को सुगन्धित तथा प्रकाश से आलोकित किया जाता है। अत: श्री कृष्ण का आह्वान करने के लिए पहले तो इस भारत के वासियों के आहार-व्यवहार-विचार के शुद्धिकरण की आवश्यकता है। आज तो भारत में घर-घर में काम बसता है, सभी के मन में हराम अथवा 'दाम' बसता है। श्री कृष्ण के पधारने के लिए तो कोई जगह ही खाली नहीं है, कोई सिंहासन ही नहीं है। सभी के हृदय रूपी सिंहासन पर किसी-न-किसी विकार का अधिकार जमा हुआ है, तब एक नगर के दो राजा कैसे हो सकते हैं? श्री कृष्ण को तो अशुद्ध हाथ छू तक भी नहीं सकते, उस पर अपवित्र दृष्टि नहीं पड़ सकती, अपवित्र वृत्ति वाले लोग उसके पास नहीं पहुँच सकते, विकारी व्यक्ति के हाथ उसके लिए भोजन नहीं बना सकते और मलेच्छ स्वभाव के नर-नारी तो उसके दास-दासी या किंकर-भृत्य भी नहीं बन सकते। अत: श्री कृष्ण का आप लाख बार आह्वान कीजिए परन्तु जब तक नर-नारी का मन मन्दिर नहीं बना है, जब तक यहाँ दिव्य गुणों की अगरबत्ती से वातावरण सुगन्धित नहीं हुआ है, जब तक उनका मन ज्ञान द्वारा आलोकित नहीं हुआ है तब तक श्री कृष्ण, जो कि देवताओं में भी श्रेष्ठ और शिरोमणि हैं, यहाँ नहीं आ सकते।

आज लोग जन्माष्टमी का उत्सव मनाते हैं तो बिजली के सैकड़ों बल्ब जगाकर खूब उजाला करने का यत्न करते हैं। परन्तु आज आत्मा रूपी बल्ब तो फ्यूज हो चुका है! आज बाहर तो रोशनी की जाती है परन्तु स्वयं आत्मा रूपी चिराग़ के तले अन्धेरा है और उस अन्धेरे में विकार रूपी चोर छिपे बैठे हैं।

शेष भाग पृष्ठ 20 पर

अमृत-सूची

- श्री कृष्ण का आह्वान 3
- पवित्रता की रक्षा ही सच्चा रक्षाबंधन है (सम्पादकीय) 4
- हर कला से सम्पन्न थी दादी जी 7
- विश्व नागरिकत्व 10
- प्यारी दादी जी (कविता) 12
- रावण की बेटी चिन्ता 13
- बढ़ती डिग्रियां, घटते मूल्य 16
- शिक्षा एवं शिक्षित समाज 17
- अनोखे कोच और कप्तान 21
- बीती को याद करना माना खुद ही खुद को सज़ा देना 22
- श्रेष्ठ भाग्य-निर्माण का आधार त्याग 25
- भाई-बहन के सच्चे प्यार की राखी (कविता) 26
- उमंग-उत्साह की धनी दादी जी 27
- राजयोग और सामाजिक स्वास्थ्य 28
- सचित्र सेवा-समाचार 30
- विक्रम और बेताल का आध्यात्मिक रहस्य 33
- सच की जीत 34

सम्पादकीय

पवित्रता की रक्षा ही सच्चा रक्षाबंधन है

यदि मैं आपको यह बताऊँ कि रक्षा-बन्धन वास्तव में नारी के द्वारा नर की रक्षा का प्रतीक है, न कि नर द्वारा नारी की रक्षा का, तो शायद आप चौंक जायेंगे। परन्तु यह बात अक्षरश: सत्य है। कालान्तर से अपने पर्वों के असली रहस्य को भूल जाना मानव समाज का स्वभाव है। यदि किसी से पूछें कि रक्षा-बन्धन का त्योहार कब शुरू हुआ था तो प्राय: यही उत्तर मिलेगा कि यह तो परम्परा से चला आ रहा है। प्रश्न उठता है कि क्या नारी शुरू से ही अबला रही है? क्या वह सतयुग में भी पुरुषों पर निर्भर थी? सतयुगी अथवा त्रेतायुगी देवी-देवताओं, श्री लक्ष्मी-श्री नारायण, श्री सीता-श्री राम इत्यादि के जो चित्र तथा मूर्तियाँ आज उपलब्ध हैं उनमें स्त्री-पुरुष दोनों ही राजसिंहासन पर विराजमान होते हैं। इतना ही नहीं बल्कि देवियों का नाम देवताओं से पहले लिया जाता है। जैसे कि श्री राधा-श्री कृष्ण, श्री सीता-श्री राम इत्यादि। इससे स्पष्ट है कि स्वर्ण एवं रजत काल में 'यथा राजा-रानी तथा प्रजा' की उक्ति के अनुसार नारियों को पुरुषों से भी अधिक सम्मान प्राप्त था। उस जमाने में धन-पदार्थों का भी इतना बाहुल्य था कि किसी नारी के आर्थिक सहायता माँगने का तो प्रश्न ही न था। भला श्री लक्ष्मी जैसी देवियाँ, जिनसे भक्तजन आज तक धन माँगते हैं, क्या आर्थिक सहायता के लिए अपने भाई को वचनबद्ध करेंगी? उस अमरलोक में अकाल-मृत्यु भी नहीं होती थी जो कोई नारी बाल-विधवा हो जाए और उसे जीवन निर्वाह के लिए आश्रय की ज़रूरत हो।

प्रचलित प्रथा सार्थक नहीं है

सतयुग एवं त्रेता के बाद के जमाने में भी रक्षा-बन्धन के बारे में प्रचलित प्रथा वास्तविक परिस्थितियों पर पूरी नहीं उतरती। आर्थिक रीति से कन्या अपने पिता पर और विवाहित नारी अपने पति पर निर्भर होती है। अपने भाइयों का आश्रय तो उसे दोनों के न रहने की हालत में ही लेना पड़ेगा। परन्तु सभी के साथ तो ऐसा नहीं होता। तब भला रक्षा-बन्धन की सार्वजनिक रस्म का क्या अभिप्राय है? यदि कहें कि विधवा होने की सम्भावना इसका कारण बनी होगी तो प्रश्न उठेगा कि सती की रस्म के अनुसार तो विधवा नारी अपने जीवन को ही समाप्त कर देती थी। इसके अतिरिक्त पहले लोग संयुक्त परिवारों (Joint Families) में रहते थे। अत: विधवा ससुराल अथवा मायके के संयुक्त परिवार में रहती थी न कि वह केवल अपने भाइयों पर आश्रित होती थी। कई बार बहन का विवाह धनाढ्य परिवार में हो जाता है जबकि भाई निर्धन होता है, जो आवश्यकता पड़ने पर बहन की आर्थिक सहायता कर ही नहीं सकता। इसी तरह, एक बड़ी बहन अपने बहुत छोटे आयु वाले भाई से आर्थिक सहायता की क्या आशा रख सकती है? आज की कमरतोड़ महँगाई के जमाने

में जबकि संयुक्त परिवार अस्त-व्यस्त हो गए हैं और पेट पालने के लिए कन्याओं-माताओं को भी नौकरी करनी पड़ती है, तो रक्षा-बन्धन का आर्थिक महत्त्व बिल्कुल नहीं के बराबर ही है। आज के नर-नारी अनिश्चित भविष्य की आर्थिक व्यवस्था के लिए जीवन बीमा को महत्त्व देते हैं, न कि रक्षा-बन्धन को।

लाज की रक्षा

रक्षा बन्धन के उपलक्ष्य में दूसरा प्रचलित मन्तव्य यह है कि भाई, बहन की पवित्रता, लाज अथवा सतीत्व की रक्षा करेगा। यह बात भी वास्तविक जीवन की परिस्थितियों में पूरी नहीं घटती। क्या लाज की रक्षा पिता, पति, अन्य सम्बन्धियों, शासन अथवा समूचे समाज का कर्त्तव्य न होकर केवल भाइयों का ही कर्त्तव्य है? एक बहुत छोटा भाई अपनी बड़ी बहन की लाज की रक्षा तो कर ही नहीं सकता। इसी रीति यदि बहन किसी दूर देश में रहती है तो अचानक संकट पड़ने पर भाई के लिए उसके सम्मान की रक्षा करना तो दूरी के कारण सम्भव ही नहीं है। फिर, जब सारे समाज की सभी बहनें भी भाइयों को रक्षा बाँधती हैं तो विचार की बात है कि उनकी पवित्रता को किससे खतरा है? अवश्य ही यह पतित, विकारी और गिरे हुए समाज का चिन्ह है कि मनुष्य दूसरों की बहनों को अपनी बहन के समान न समझें और उनकी काम वृत्ति के कारण, समूचे समाज की सभी बहनों की इज्जत को, सभी भाइयों से खतरा हो। ऐसी हालत में तो रक्षा बाँधती हुई हर बहन को अपने भाई से यह कहना चाहिए कि 'जैसे तुम मुझे अपनी बहन समझते हो वैसे ही अन्य नारियों को भी अपनी बहन समझोगे तभी मेरी लाज का बचाव हो सकता है, अन्यथा नहीं।' परन्तु सिनेमा, फैशन, माँस-मदिरा इत्यादि व्यसनों से ग्रसित और चरित्रहीनता की चरम सीमा पर पहुँचे हुए निर्लज्ज समाज के भाइयों में वह पवित्रता का बल और वह सामर्थ्य ही कहाँ है, जो वे अपनी बहनों को ऐसा वचन दे सकें और उनकी लाज की रक्षा कर सकें। कलियुग के अन्त तक तो मनुष्य इतने कामातुर, इतने अन्धे हो जाते हैं कि नारियों को खुले आम कैबरे नृत्य (Cabaret Dance) करने पर मजबूर करके, शर्म से डूब मरने की बजाये, खुश होते हैं।

रक्षा-बन्धन का प्रारम्भ

ऐसी संकट की वेला के बारे में ही द्रोपदी और एक दुर्योधन का वर्णन दृष्टान्त के रूप में किया गया है। परन्तु वास्तव में यह चरित्र-चित्रण सारे समाज की दुर्दशा का है। जब व्यभिचार की अति हो जाती है और पाप का घड़ा भर जाता है तो कलियुग के अन्त और सतयुग की आदि के 'संगमयुग' की वेला में गीता के भगवान शिव स्वयं अवतरित होकर यह महावाक्य उच्चारते हैं कि 'हे आत्माओ! काम महाशत्रु है। यही सबसे बड़ी हिंसा है, आदि-मध्य-अन्त दु:ख देने वाला है। इसी के द्वारा यह सृष्टि पतित और वेश्यालय बन गई है, जहाँ घर-घर में काम कटारी चलती है। काम-विकार नर्क का द्वार है। तुमने ही मुझ पतित पावन परमात्मा को पुकारा है। अब मैं इस कलियुगी वेश्यालय को सतयुगी शिवालय बनाने के लिए अवतरित हुआ हूँ। अब इस कलियुगी पुरानी दुनिया का विनाश और सतयुगी नई दुनिया की पुनर्स्थापना होनी है। उस सतयुगी देवलोक में सम्पूर्ण निर्विकार आत्माएँ ही जन्म ले सकेंगी। पवित्रता ही सुख और शान्ति की जननी है। यदि तुम पवित्र बनोगे तो नूतन विश्व के मालिक बनोगे वरना विनाश को प्राप्त हो जाओगे। अत: अब मैं तुम्हें आदेश देता हूँ कि सारे कल्प के अपने इस अन्तिम जन्म में ब्रह्मचर्य व्रत को धारण करो और पवित्र बनो।' जो मनुष्य परमपिता परमात्मा शिव की इस कल्याणकारी आज्ञा को मान कर पवित्रता के बन्धन में बँधने को सहर्ष तैयार हो जाते हैं, उन्हीं की मन-वचन-कर्म से काम विकार से रक्षा के लिए, परमात्मा शिव उन्हें रक्षा-

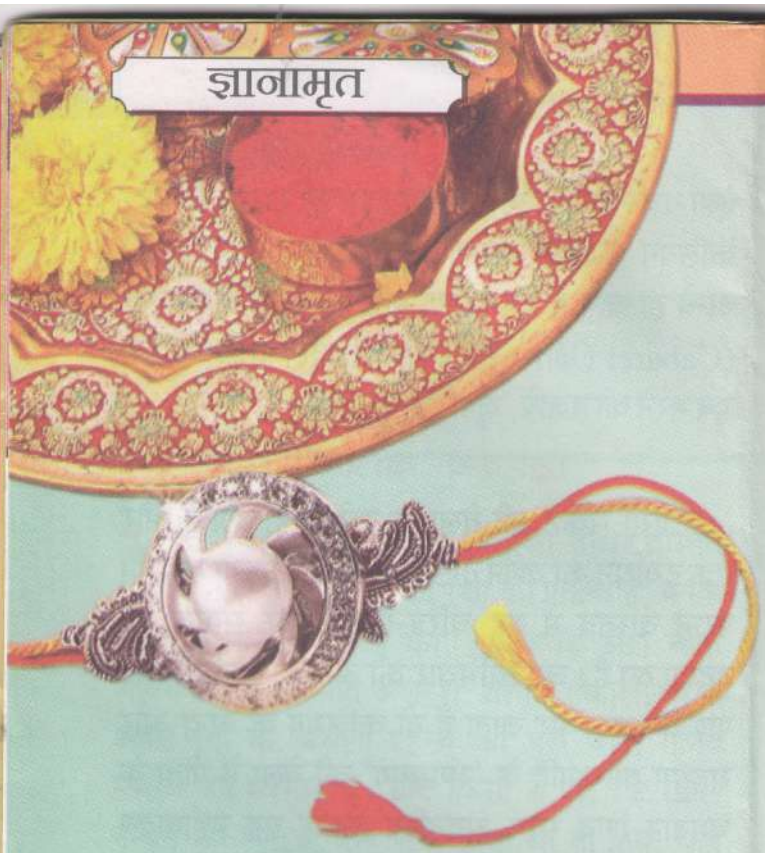

बन्धन के पवित्र सूत्र में बँधवाते हैं, जो उनके आजीवन ब्रह्मचर्य व्रत पालन करने की प्रतिज्ञा की प्रतीक है। इस प्रकार, इस पावन पर्व का प्रारम्भ स्वयं परमात्मा द्वारा पुरुषोत्तम 'संगमयुग' पर होता है।

बहन-भाई का पवित्र नाता

गोपीवल्लभ परमात्मा शिव प्रजापिता ब्रह्मा के द्वारा सच्चा 'रुद्र गीता ज्ञान यज्ञ' रच कर ईश्वरीय ज्ञान व योग और पवित्रता के बल से सर्वप्रथम अबला नारियों को सबला अथवा शिव-शक्तियाँ बनाते हैं। भारत में दुर्गा, अम्बा, काली, शीतला इत्यादि शिव शक्तियों का गायन-पूजन आज तक होता है। वास्तव में इन्हीं शिव शक्तियों अथवा चेतन ज्ञान-गंगाओं के द्वारा मनुष्यों को रक्षा-बन्धन बाँध कर ब्रह्मचर्य की प्रतिज्ञा करवाने का पावन कर्त्तव्य चलता है। ब्राह्मणों के द्वारा अपने यजमानों को राखी बाँधने की प्रथा भी प्रचलित है परन्तु कुख-वंशावली ब्राह्मण न तो रक्षा-बन्धन के महत्त्व को जानते हैं और न ही इनमें वह ईश्वरीय ज्ञान-योग का बल है जिससे वे स्वयं और दूसरों को पवित्रता की धारणा करवा सकें। वास्तव में, ब्रह्मामुख वंशावली शिव-शक्तियाँ ही वे सच्ची ब्राह्मणियाँ (ब्रह्माकुमारियाँ) हैं जो स्वयं पवित्रता के व्रत को धारण करके अन्य मनुष्यों को भी इस कल्याणकारी बन्धन में बाँधने की अलौकिक सेवा करती हैं। रक्षा-बन्धन का पावन पर्व इन अलौकिक ईश्वरीय सेवाधारी बहनों के द्वारा ही शुरू होता है। पावन बनने के लिए वे पुरुषों को यह अनोखी युक्ति बताती हैं कि ''सभी मनुष्य-आत्माएँ एक ही पिता परमात्मा की सन्तान होने के नाते से भाई-बहन ही तो हैं। इसी सम्बन्ध में स्थित होकर चलेंगे तो काम विकार का प्रश्न ही नहीं उठेगा।'' लौकिक बहन द्वारा भाई को राखी बाँधने की रस्म इसी महत्त्वपूर्ण रहस्य का विस्मृत रूप है।

राखी पर तिलक लगाने का महत्त्व

राखी बाँधने के बाद बहनें अपने भाइयों के मस्तक पर तिलक भी लगाती हैं। परन्तु, इस रस्म के भावार्थ को आज सभी भूल चुके हैं। वास्तव में, मस्तक अथवा भृकुटि का मध्य मनुष्य शरीर का वह स्थान है जहाँ आत्मा निवास करती है। जब शिव-शक्तियाँ मनुष्यों को अर्थ-सहित सच्चा रक्षा-बन्धन बाँधती हैं तो वे उन्हें परमात्मा शिव द्वारा बताये हुए ईश्वरीय ज्ञान का ये रहस्य भी सुनाती हैं कि 'वास्तव में, आप नश्वर शरीर नहीं किन्तु अविनाशी आत्मा हो। आत्मा का असली स्वधर्म पवित्रता है। स्वयं को तथा दूसरों को आत्मा समझ कर कर्म करने से काम महाशत्रु पर स्वत: ही विजय प्राप्त हो जाती है क्योंकि काम विकार की उत्पत्ति का मूल कारण देह-अभिमान अर्थात् स्वयं को और दूसरों को शरीर समझना ही है।'

वर्तमान समय परमात्मा शिव पुन: अवतरित हो चुके हैं और प्रजापिता ब्रह्माकुमारियों के द्वारा मनुष्यों को रक्षा-बन्धन के पवित्र सूत्र में बाँध कर उन्हें निकट भविष्य में स्थापित होने वाली सतयुगी पावन सृष्टि में चलने के योग्य बना रहे हैं। ■■■

पुण्यतिथि पर विशेष –

हर कला से सम्पन्न थी दादीजी

ब्रह्माकुमार सतनारायण भाई, टोली विभाग, ज्ञान सरोवर

आदरणीया प्रकाशमणि दादीजी 38 वर्षों तक ब्रह्माकुमारी संस्थान की निमित्त मुख्य प्रशासिका रहीं। उनमें जो दिव्य गुण और शक्तियाँ देखी वो अनुभव के रूप में प्रस्तुत करने जा रहा हूँ –

ब्रह्मा बाबा के समान निरहंकारी

इतना बड़ा कारोबार संभालते हुए दादाजी को नाममात्र भी अहंभाव नहीं था। मुख से हमेशा यही निकलता था कि बाबा करनकरावनहार है। जब भी कहीं दादीजी का सम्मान होता, जैसे कि डिग्री मिली या विश्व-शान्तिदूत पुरस्कार मिला या दादाजी के नाम पर कहीं मार्ग का नामकरण हुआ तो दादीजी हमेशा कहती थी कि ये पुरस्कार मुझे नहीं मिला है, आप सभी को मिला है। सभी के सहयोग से यह सेवा-कार्य हुआ है। कभी किसी नये सेवा-कार्य की शुरूआत होती थी तो दादीजी सभी से राय लेती थी। सेवाकेंद्रों पर या कहीं भी कोई दिशानिर्देश भेजती थी तो मधुबन निवासियों को क्लास में जरूर पढ़कर सुनाती थी और सभी की स्वीकृति लेती थी कि आप सभी को मंजूर है? ऐसा करें?

सबके साथ समान व्यवहार

कोई कितना भी बड़ा हो या छोटा हो, नया हो या पुराना हो, उनके लिए कोई भी अपना-पराया नहीं था। मजदूरों व झाड़ू-पोछा करने वाली माइयों से भी उनका उतना ही प्रेममय व्यवहार था। वे सभी भी अपनेपन का अनुभव करते थे। ठण्ड के दिनों में उन सभी को दादीजी कम्बल देती, खर्ची देती, हालचाल पूछती और ईश्वरीय ज्ञान की कुछ बातें भी बताती थी। अन्य अनेक अवसरों पर भी उन्हें बाबा के घर का महत्व बताती थी। छोटे बच्चों से भी बहुत प्यार करती थी, यहाँ तक कि उनको गोद में भी उठा लेती थी और बच्चों जैसी बातें कर उन का दिल जीत लेती थी। बीमारों से मिलने और उनका हालचाल पूछने खास हॉस्पिटल जाती थी।

शान्ति की मूर्ति अव्यक्त फरिश्ता थी

दादीजी को शान्ति में रहना बहुत अच्छा लगता था। एक बार की बात है, मैं हिस्ट्री हाल के पास किसी काम से खड़ा था। आदरणीया दादीजी अपने कमरे से आ रही थी। उन्होंने देखा तो पास में बुलाया। मैंने साइलेन्स का बैज लगा रखा था। जनवरी मास चल रहा था। दादीजी ने कहा, बहुत अच्छा है, बैज लगाकर रखना। फिर खड़े होकर दृष्टि भी दी। जब भी भट्ठियों के प्रोग्राम होते थे, दादीजी बहुत शक्तिशाली अव्यक्त स्थिति का अनुभव कराती थी, इससे वातावरण में गहरा सन्नाटा छा जाता था।

मुख से हमेशा बाबा-बाबा कहती

जब भी दादीजी मुरली सुनाती, बाबा-बाबा शब्द उनके मुख से गूंजता रहता था। हर रोज बाबा के कमरे में जाकर जब भी आती, बाबा के कुछ ना कुछ इशारे सभी को सुनाती। मुरली सुनाते, पीछे बाबा के चित्र को देखकर कहती, बाबा! आप बैठे हो, हमें किस बात की चिन्ता, हम तो इन्स्ट्रुमेंट हैं। दादीजी कभी अपने लिए भी मैं शब्द नहीं कहती थी। हमेशा कहती, दादी की शुभ राय है, दादी का ऐसा विचार है। फिर सभी से राय लेती थी।

विश्व नागरिकत्व

ब्रह्माकुमारी गीता बहन, वरिष्ठ राजयोग शिक्षिका, शान्तिवन

सारा विश्व आज सात खण्डों में विभाजित हैं। ये खण्ड हैं – एशिया, यूरोप, अफ्रीका, अमेरिका, ओस्ट्रेलिया, उत्तरी ध्रुव और दक्षिणी ध्रुव। इन सात खण्डों में अनेकानेक देश हैं। हर देश के अपने कायदे-कानून हैं, देश के नागरिक उनका पालन करते हैं। अवश्य ही सृष्टि खेल में कोई समय यह विश्व अखण्ड था, जो आज खण्डों में विभाजित हुआ है। हम सभी कभी अखण्ड विश्व के नागरिक थे और एक समान धारणाओं, अनुशासन व मूल्यों का पालन करते थे।

संसार की वृद्धि और विभाजन का कारण कामवासना

प्रारम्भ में मानव जीवन और मानव संसार शुद्ध आत्मबल से, पवित्र रूहानी दृष्टि की शक्ति से, शुभ संकल्पों से चलता था। धीरे-धीरे मनुष्यात्मायें आत्मविस्मृत होकर देहाभिमान के वश होने लगीं। आत्मशक्ति क्षीण हुई, दैहिक विकारी वृत्तियाँ उत्पन्न हुईं तो विषय वासना से प्रजोत्पत्ति और फिर जनसंख्या वृद्धि होने लगी। इससे नये-नये देश, राज्य, नगर बनते गये। एक दृष्टिकोण से संसार वृद्धि से संसार विभाजन का कारण कामवासना को कहा जा सकता है।

देश के अन्दर भी लड़ाई, सीमा पर भी लड़ाई

अब जो जहाँ रहे, वे वहीं की भौगोलिक स्थिति और लोगों की मानसिकता के अनुसार ढलने लगे। उसी अनुसार उनकी सभ्यता, संस्कार, रीति-रस्म, आहार-विहार, रहनी-करनी बनती गई। समय और प्रकृति के संसर्ग में आते-आते मानव और अधिक देहाभिमानी, भौतिक, इन्द्रिय लालुप बनने लगा। जब देह से आसक्त हुए तो अपने स्थान की प्राकृतिक व्यवस्था से भी आसक्त होने लगे और जन्म हुआ तेरे-मेरे, अपने-पराये के भावों का। जब मैं-तू, तेरा-मेरा हुआ तो लड़ाई-झगड़े होने लगे। वसुधैव कुटुम्बकम् की भावना, भाईचारे की भावना, सर्व हिताय-सर्व सुखाय की भावना कमजोर होकर खण्डित होने लगी। आज उसी संकुचित मानसिकता के कारण अमन-चैन का ये बसेरा भेदभाव और लड़ाई-झगड़े का मैदान बन गया है। हर देश प्रांतभेद, रूपभेद, रंगभेद, धर्मभेद, भाषाभेद के नाम पर अंदर-अदर भी लड़ रहा है और अपने आस-पास के देशों से भी लड़ रहा है। कोई किसी को निकाल रहा है, कोई किसी को स्वीकार नहीं कर रहा है।

स्वपरिवर्तन का ठोस कदम उठाना पड़े

अगर अभी भी हमें अखण्ड विश्व और एक विश्व परिवार का सपना साकार करना है तो स्वपरिवर्तन का ठोस कदम उठाना पड़े। व्यक्ति से समष्टि बदलती है। हमें अपनी मानसिकता बदलनी पड़े। कोई भी देश, कोई भी व्यवस्था संकुचित, अमानवीय और वैर-वैमनस्य के भावों से नहीं चल सकती, सुखमय नहीं रह सकती। हर व्यवस्था को सुचारू रूप से चलाने के लिए उदात्त, बेहद, निःस्वार्थ भावना चाहिए। सच्चरित्रवान लोग चाहिएँ। सर्व

स्वीकार्य श्रेष्ठ नियम-मर्यादाओं का ढाँचा चाहिए, मूल्यनिष्ठ आचारसंहिता चाहिए।

चलो हम सभी विश्व नागरिक बनें। हम विश्वपिता परमात्मा के बच्चे हैं। सारा विश्व हमारा परिवार है। हम स्थल और काल की सीमाओं से ऊपर उठ जायें, आत्मभाव की बेहद स्थिति में स्थित हो जायें और कुछ सार्वभौम तथ्यों को अपना लें –

आत्मधर्म को अपनायें

देह के धर्म भिन्न-भिन्न हैं। उनके धर्मस्थापक अलग-अलग हैं। भले ही मूल विचारधारा में साम्य होते हुए भी हरेक की उपासना पद्धति, तीर्थस्थान, शास्त्र अलग होने के कारण संघर्ष होते ही रहते हैं। हम देहधर्मों को छोड़ें, आत्मधर्म को अपनायें। सभी आत्माओं का पिता परमात्मा एक ही है। सभी आत्माओं का स्वधर्म, निजगुण-धर्म एक ही है शान्ति और पवित्रता। देहधर्म से चाहे कोई हिन्दू है, कोई मुसलमान, कोई यहूदी, कोई ईसाई लेकिन हरेक को जीवन में शान्ति, सुख, आनन्द, प्रेम, पवित्रता चाहिए। वास्तव में इन सद्गुणों के ज्ञान को ही सत्य ज्ञान कहा जाता है और उसे अनुभव करने की अभ्यास विधि को ही आत्मधर्म कहा जाता है। अगर हम सभी आत्मधर्म में स्थित होकर कर्म करें तो आपसी सौहार्द और सामंजस्य का वातावरण बना रहेगा। विरोध, विध्वंस और विनाशकारी प्रवृत्तियाँ खत्म हो जायेंगी।

स्वराज्य शासक बनें

आज विभिन्न देशों में, विभिन्न राजनैतिक पार्टियाँ बहुमत के आधार पर शासन करती हैं। कौन किस पर नियंत्रण करे और कौन किसका अनुसरण करे? इस निर्णय में भी काफी समय, शक्ति और धन व्यर्थ होते रहते हैं। जनता दुख के फल पाती रहती है। क्यों नहीं हम स्वयं के शासक बनें और स्वयंस्फूरित अनुशासन में चलें। अपनी कर्मेन्द्रियों और अपनी सूक्ष्म शक्तियों – मन, बुद्धि, संस्कार पर संयम रखें। जब हम आत्मायें सद्ज्ञान स्वरूप, सद्विवेकपूर्ण और आत्मशक्ति सम्पन्न होते हैं तो कोई भी इन्द्रियरस, कोई भी परिस्थिति, वातावरण, संग हमें बहका नहीं सकते हैं, दिग्भ्रमित नहीं कर सकते हैं। जब हम जाग्रत और सशक्त नहीं होते हैं तो नकारात्मक प्रभाव में आ जाते हैं और अनुचित कर्म कर बैठते हैं। जिनका स्वयं पर संयम है, वे ही सर्व पर शासक बन सकते हैं। कहा भी जाता है, मन जीते – जगतजीत। जब आपे से बाहर हो जाते हैं तभी अप्रिय बन जाते हैं। आंतरिक नियम-संयम टूटते हैं तब बाहरी कायदे-कानून बनाने पड़ते हैं। अनुशासन माना ही आंतरिक शासन। हम आत्मशासन को अपनाकर प्रियशासक, श्रेष्ठ शासक, सफल शासक बन जाते हैं। तभी शान्ति, बंधुत्व और सुलह का वातावरण बना पाते हैं।

श्रेष्ठ मत को मानें

जीवन और संसार सम्बन्धित विविध पहलुओं पर हमारी विभिन्न मान्यतायें होती हैं। अगर ये मान्यतायें गलत हैं तो हमारे अभिप्राय, मत, परामर्श, व्यवहार भी गलत ही होंगे। आज विभिन्न मतों के कारण भी बहुत कलह-क्लेश होते रहते हैं। मानव स्वयं सम्पूर्ण नहीं हैं और उनकी रचना – धर्म और विज्ञान भी सम्पूर्ण नहीं हैं। पूर्ण और आखिरी सत्य परमात्मा ही बता सकते हैं। परमात्मा को ही हम कहते हैं – तमसो मा ज्योतिर्गमय, असतो मा सद् गमय। परमात्मा की बताई हुई सर्वश्रेष्ठ श्रीमत को हम जानें, समझें, मानें और उस अनुसार चलें तो न मनमर्जी से जीने का सवाल, न परमत अनुसार जीने की बात।

परम सत्य परमात्मा जो कुछ कहेंगे, सत्य कहेंगे, कल्याणकारी कहेंगे और जीवन में धारण करना संभव है, तभी कहेंगे। अगर हम सभी अपने अल्पज्ञ मन-बुद्धि की मत को छोड़ दें और परमपिता की श्रीमत को शिरोधार्य करें तो आपसी मनोमिलन, संस्कार मिलन, स्नेहमिलन संभव हो सकता है।

प्रेम की भाषा को अपनायें

हमारे मुख की भाषाएँ अलग-अलग हैं। हो सकता है कि हम भिन्न भाषाओं को न बोल सकें, न समझ सकें, लेकिन प्रेम की भाषा, शान्ति की भाषा हम महसूस कर सकते हैं। भाषाभेद के कारण भी कितने झगड़े हो रहे हैं! हम अपने चेहरे के हावभाव से, नैनों से आत्मीयता के वायब्रेशन फैलायें तो हमें न पहचानने वाले भी हमसे अपनापन अनुभव करेंगे। हिंसक, जंगली जानवर भी प्रेम की भाषा को समझते हैं और हमारे वश हो जाते हैं, हमारे इशारे पर चलते हैं। इस प्रकार शुभ भावना, स्नेह भावना भरी भाषा आज के बिखरे विश्व को एक कर सकती है। प्रेम की भाषा अपनाकर हम विश्व नागरिक बन जायें तो सहिष्णुता, सहयोग, सेवाभाव का वातावरण बना सकते हैं जहाँ अन्याय और पश्चाताप नजर भी नहीं आयेंगे। अखण्डता और एकता का आधारभूत सूत्र प्रेम की भाषा है।

ईश्वरीय कुल की मर्यादा अपनायें

देहअभिमान में आने से समाज की वर्ग व्यवस्था – वर्ण व्यवस्था (जातिप्रथा) में बदल गई और आज संसार अनेक प्रकार के जातिभेद में विभाजित हो गया है। एक-दो के प्रति ऊँच-नीच, अगड़ी-पिछड़ी दृष्टि हो गई है। सत्य तो यह है कि चलन से, कर्म से, संस्कार से हर कोई आज शूद्र, पतित, भ्रष्ट बन गये हैं। छुआछूत के दृष्टिकोण से ही धर्मांतरण की समस्या उत्पन्न हुई है। आइये, देह की जाति और कुल के भेदभावों से हम निकल जायें, अपने मूल सत्य परिचय को याद रखें कि हम आत्मा हैं, एक ही परमात्मा के बच्चे, एक ही परमधाम के निवासी हैं। अपने असली स्वरूप में समान रूप से शुद्ध, सत्य, शांत हैं। इस स्मृति से हम व्यवहार करें तो सभी भेदभाव खत्म हो जायेंगे।

आज नाम, रूप, लिंग, आयु, रंग, व्यवसाय, जाति, धर्म, भाषा और राष्ट्रीयता के नाम पर होने वाले लड़ाई-झगड़ों, असंतोष-नाराजगी से हमें अपने को ऊपर उठाना है। अपने सनातन, शाश्वत आत्मभाव में अवश्य स्थित होना है।

एक परमात्मा पिता, एक प्रकृति माता, एक विश्व परिवार, एक मानवजाति की धारणा ही भिन्न-भिन्न खण्डों में रहते हुए भी अखण्ड विश्व, वसुधैव कुटुम्बकम और भाईचारे की भावना को साकार करेगी। हम सब एक हैं, एक परमात्मा के हैं – यह मानसिकता ही अमन-चैन लायेगी, संसार को स्वर्ग बनायेगी। ■■■

प्यारी दादी जी

ब्रह्माकुमार मदन मोहन, ओ.आर.सी. गुड़गाँव

वो फरिश्तों-सा चलना, खुशियों की खिलती धूप।
प्यारी दादी आप-सा, कहाँ वो रूप अनूप।।

मुख-मण्डल पर तेज वो, प्रकाश का दिव्य प्रवाह।
आप सादगी की मूरत, मन में प्रेम अथाह।।

बाबा ही बाबा हर पल, बस बाबा ही संसार।
हाथों में प्रभु के आपकी, जीवन की पतवार।।

निमित्त और निर्माण का, सुन्दरतम् वो खेल।
सदा आपसे यूँ लगता, जीवन सच्चा खेल।।

सबकी सुनती बड़े प्यार से, देती सुन्दर हल।
सब कहते प्यारी दादी, आप बड़े ही सरल।।

प्रशासन की कला, सबका कैसे हो भला।
कोई कैसे भी रहा, सबको लेती थी चला।।

याद आते हैं वो दिन, उमंगों में झुलाना।
बड़े निराले ढंग से, मुरली मधुर सुनाना।।

हर दिल को छू जाती, आपकी प्यारी शिक्षाएँ।
हर मन में पावन-पावन-सी, शीतलता हैं बिखरायें।।

प्रकाश-स्तंभ पर दादीजी, जब-जब भी हम यूँ जाते हैं।
तेरी ही यादों की खुशबू, हम वहाँ निरन्तर पाते हैं।।

गतांक से आगे

रावण की बेटी चिन्ता

ब्रह्माकुमार नरेश, मुजफ्फरनगर

अस्तित्व की महसूसता वर्तमान में रहते हुए होती है परन्तु चिन्ता करता हुआ मनुष्य या तो व्यर्थ की बीती बातों में रमण करता है या फिर भविष्य की काल्पनिक अनहोनी के डर से अपनी खुशियों का दमन कर रहा होता है, तो उसे जीवित कहेंगे क्या? परन्तु, अपवाद है ब्रह्माकुमारी सेवाकेन्द्रों में सुनाई जा रही प्रात:कालीन ज्ञान-मुरली, जो बीते इतिहास में या भविष्य के सुनहरे संसार में रमण कराती है और उस दौरान आत्म-अस्तित्व व जीवितपने की जैसी महसूसता होती है, वह इस नश्वर मानव-जीवन में किसी भी अन्य समय में नहीं होती। इस बहुमूल्य जीवन में चिन्ताओं के लिए कोई भी काल, समय या स्थान नहीं होना चाहिए। शरीर एक दिन चिता की लकड़ियों पर जलेगा परन्तु आज के मनुष्य का मन तो प्रतिदिन चिन्ता की आँच में तपता रहता है। चिन्ता से शरीर को हुई क्षति की भरपाई हो नहीं सकती क्योंकि चिन्ता से आयु घटती है। चिन्ताग्रस्त मनुष्य का जीवन उस सिगरेट के समान है, जो अग्नि से शुरू हो कर राख में समाप्त होता है जबकि शान्तस्वरूप मनुष्य का जीवन बीज से शुरू होकर फल बनकर समाप्त होता है, जो अगले जीवन को भी फलदाई बनाता है। डॉक्टर सिगरेट से उम्र कम होना बताते हैं, पर्यावरण-विशेषज्ञ प्रदूषण से उम्र कम होना बताते हैं, अध्यात्मवादी विकारों से उम्र कम होना बताते हैं और मनोचिकित्सक चिन्ता से उम्र कम होना बताते हैं। परन्तु, यह कोई नहीं बताता कि उम्र लम्बी कैसे हो? राजयोग का ज्ञान बताता है कि दिव्यगुणों की धारणा से उम्र लम्बी भी होती है और खुशहाल व सुखमय भी। सतयुग में उम्र 150 वर्ष हुआ करती थी। दिव्यगुणों की धारणा, मनोविकारों व कमजोरियों से मुक्त करती है।

चिन्तामुक्त समाज की स्थापना

प्रसन्नता दैवी गुण है, उदासी मायावी अवगुण है और चिन्ता तो साक्षात् आसुरी अभिशाप है। धार्मिक ग्रन्थों में वृत्तांत मिलता है कि किस प्रकार, किसी संन्यासी ने तप करके कुछ शक्तियाँ पाईं परन्तु क्रोधवश किसी को शाप दे दिया, जिससे उसके संचित आत्मबल व शक्तियों का पतन हो गया। शंकराचार्य द्वारा स्थापित संन्यास मार्ग उनकी इस चिन्ता का ही तो परिणाम था कि अधर्म को कैसे रोका जाए। जितने भी धर्मस्थापक हुए हैं, वे समाज की चिन्ताजनक हालत को देखते हुए ही तो नए धर्म की स्थापना हेतु प्रवृत्त हुए। चल रहे कल्प के अन्तिम प्रहर में, जब सभी धर्मस्थापकों के शान्ति व भाईचारा स्थापन करने के प्रयास निष्फल हो गए और विश्व-समुदाय किंकर्त्तव्यविमूढ़, चिन्ताग्रस्त हो गया, तब स्वयं परमपिता परमात्मा शिव ने विश्व में शान्ति की स्थापना हेतु ब्रह्मा के साकार तन में अवतरित होकर चिन्तामुक्त नए समाज की स्थापना का यज्ञ रचा है। परम सौभाग्यशाली हैं वे मनुष्य, जो इस रहस्य को समझ कर, इस यज्ञ में अपनी भागीदारी निभा रहे हैं।

चिन्ता का चयन क्यों?

जिस प्रकार एक के कर्म दूसरे का भाग्य नहीं बना सकते, उसी प्रकार एक की चिन्ता दूसरे को जीते-जी नहीं जला सकती। परन्तु, मोह होने पर एक की चिन्ता दूसरे को भी चिन्तित करती है, जैसेकि बेटा यदि चिन्ताग्रस्त है तो मां भी चिन्ता में जलती है। चिन्ता मनुष्य की अपनी रचना है, अपने पैरों पर अपनी ही कुल्हाड़ी चलाना है। संसार में एक से बढ़ कर एक

मनमोहक वन-उद्यान हैं, तो मरूभूमि, दलदल, बीहड़-जंगल भी हैं। मनुष्य मनमोहक स्थानों पर जाना पसन्द करता है; कठिन-वीरान स्थलों पर नहीं। परन्तु चिन्ता और सुखदाई बातों में से एक के चयन में वह चिन्ता का ही चयन करना क्यों पसन्द करता है? क्योंकि उसकी वृत्ति, दृष्टि, कृति आदि नकारात्मक हो चुकी हैं। इन्हें ठीक करना उसे नहीं आता क्योंकि वह आध्यात्मिक समझ व राजयोग के ज्ञान से वंचित है। क्रोध, मूर्खता से शुरू होकर पश्चाताप पर समाप्त होता है परन्तु चिन्ता की वृत्ति का न तो आदि है और न अन्त, इसका तो चिरस्थायी संस्कार बन जाता है। आज के दौर में हर्षित या सामान्य दिख रहे मनुष्य में भी चिन्ता सूक्ष्म रूप में बनी रहती है। चिन्तित मनुष्य यह जानते हुए भी कि चिन्ता से न तो उसकी समस्या का समाधान होने वाला है और न ही उसे सुख-शान्ति मिलने वाली है, फिर भी चिन्तामुक्त हो नहीं पाता। चिन्ता में हताशा, तनाव, आलस्य, अकर्मण्यता आदि अवगुणों का समावेश होता है।

खोखली हँसी और आत्मिक हँसी

एक बार रावण के दरबार में उसके कारिन्दे (अनुचर) रोते हुए आए। रावण ने जब उनसे रोने का कारण पूछा तो वे बोले कि पृथ्वी पर आजकल हमारा कार्य ठीक से हो नहीं पा रहा है। मनुष्य आपके द्वारा फैलाए जा रहे काम, क्रोध, लोभ, असत्यता आदि की परवाह नहीं कर रहे हैं। वे तो सभी विकारों से ग्रस्त होते हुए भी हँसते-मुस्कराते, मौज मना रहे हैं। हम जब आपके विकारों की सौगात बांटते हैं, तो पाते हैं कि वे पहले से ही इनसे भरपूर हैं और फिर भी मौज में हैं। रावण यह सुन कर मुस्कराया और ताली बजा कर एक लड़की को बुलाया। उसने कारिन्दों से कहा कि इसे ले जाओ। यह मेरी लाडली बेटी 'चिन्ता' है। इसके आने के बाद मनुष्य हँसना, मुस्कराना भूल जाएंगे। फिर हुआ भी ऐसा ही परन्तु कुछ समय तक। अब मनुष्य चिन्ता में रहते हुए भी हँस लिया करते हैं और यह बात रावण के लिए 'चिन्ता' की है। परन्तु चिन्ताग्रस्त खोखली हँसी और प्रेम व आनन्द से भरपूर आत्मिक हँसी में अन्तर तो रहता ही है। माया के कारनामे तो मुक्तभोगी को दिखाई देते हैं परन्तु जो नहीं दिखाई देती, वह है रावण की बेटी चिन्ता। आज का चिन्ताग्रस्त मनुष्य प्रतिवर्ष रावण को खुद ही बनाता है और खुद ही जला कर ताली बजाता है। यदि वह अक्ल के ताले में विवेक की ताली लगाए, तो अन्दर खुद के दिव्य स्वरूप को निखारे और बुराइयों को जला डाले। फिर संसार तालियाँ बजाएगा। मन्दिरों में देव-प्रतिमाओं के समक्ष रोज तालियाँ इसीलिए तो बजती हैं।

कर्म की कोख से पैदा होती है प्रसन्नता

मनुष्य चिन्ताओं से घिरा होने पर भी चिन्ता के कारणों को नहीं त्यागता है क्योंकि चिन्तित मनुष्य का बुद्धियोग कर्म से हट कर समस्या से लग जाता है, जबकि लगना चाहिए समाधान से। श्रीमद्भगवद् गीता का ताना-बाना विषादयोग (चिन्ता) बनाम कर्मयोग के इर्द-गिर्द बुना हुआ है। युद्धभूमि में गीता सिर्फ अर्जुन को क्यों सुनाई गई? क्योंकि सिर्फ चिंताग्रस्त अर्जुन ही युद्ध (कर्म) नहीं करना चाहता था और उसने अपने हथियार (हाथ) नीचे कर दिए थे, बाकी सभी योद्धा तो युद्ध के प्रति तत्पर थे। चिन्तित मनुष्य के अन्दर जब व्यर्थ के संकल्प-विकल्प का युद्ध चल रहा हो तो वह दूसरा युद्ध (कर्म) कैसे करे? हाँ, अन्दर विकारों से धर्मयुद्ध करते हुए बाहर परिस्थितियों से कर्मयुद्ध किया जा सकता है। विकारों पर विजय से कर्म में सफलता मिलती है। कर्म से ही शान्ति और शान्ति से ही चिन्ताओं से मुक्ति मिलती है। यदि कोई व्यक्ति चिन्ताग्रस्त हो, तो वह किसी कार्य में लग जाए तो चिन्ता कम हो जायेगी क्योंकि कर्म की कोख से प्रसन्नता पैदा होती है। आप ऐसा मनुष्य खोज नहीं सकते, जो कोई कर्म न करता हो और फिर भी

प्रसन्न रहता हो। किसी परिस्थिति के आने पर जब मनुष्य कर्म छोड़ देता है तो उसकी प्रसन्नता गुम हो जाती है और वह सोचता है कि परिस्थिति ने प्रसन्नता छीनी है। कोई भी मनुष्य काम की अधिकता से कभी नहीं मरा परन्तु कार्मिक शिथिलता व चिन्ता की अधिकता से लाखों लोग मरे हैं और मर रहे हैं। आज मनुष्यों में विषाद, चिन्ता या तनाव का संस्कार बन चुका है। फिर सोशल मीडिया के तूफान आग में घी का काम करते हैं, क्योंकि मोबाइल (व्हाट्स-एप), टी.वी., इण्टरनेट, फेसबुक आदि जो कुछ परोसते हैं वह मन को उत्तेजित कर विकारों के अनुकूल और एकरसता-समरसता के प्रतिकूल ही बनाता है।

विकारों से मुक्त ही चिन्तामुक्त

चिन्ता तीन अवस्थाओं में मिट सकती है - या तो सब कुछ हो, या कुछ भी न हो, या फिर राजयोग का ज्ञान हो। पहली अवस्था राजा की है, दूसरी अवस्था बेफिक्र फकीर की है और तीसरी अवस्था उन ब्रह्माकुमार-कुमारियों की है जिन्होंने राजयोगी जीवन अपनाया है। राजाएं अब नहीं रहे, परन्तु अब भी राजसी ठाठ-बाट वाले मनुष्य हैं जो कि धन-दौलत की कमी न होने पर भी चिन्ताग्रस्त जीवन जीते हैं क्योंकि मन व तन से रोगी हैं। उसी प्रकार, पहले जैसे फकीर भी अब नहीं रहे और जो फकीर होने का स्वांग भरते हैं वे चिन्ताग्रस्त रहते हैं क्योंकि दोहरा व्यक्तित्व दुखदाई हुआ करता है। चिन्ता से मुक्त वही रह सकता है जो या तो विकारों से मुक्त हो (सतयुगी देवी-देवता) या जो ईश्वरीय ज्ञान से युक्त हो (संगमयुगी ब्रह्माकुमार-कुमारियाँ)।

मृतप्राय: जीवन से रूहानी जीवन

ईश्वरीय ज्ञान कहता है कि अभी कलियुग अपने अन्तिम प्रहर में है अत: चरित्र की गिरावट अति पर है, फलस्वरूप, सारे विकर्म-कुकर्म, अधर्म आदि पराकाष्ठा में हो रहे हैं। शिव भगवानुवाच – 'सारी दुनिया की 99 प्रतिशत आत्माएँ (मनुष्य) चिन्ता की चिता पर मरी पड़ी हैं। ऐसे मरे हुए को जिन्दा करो।' भगीरथ ने भी गंगा अवतरण करा कर राजा सगर के साठ हजार मृत पुत्रों को जिन्दा किया था। भगीरथ वास्तव में वह भाग्यशाली शरीर रूपी रथ है, जिसे परमपिता शिव ने अपना साकार रथ बनाया और ब्रह्मा नाम दिया। ब्रह्मा निमित्त बना 'सठिया गए हजारों मृतप्राय: मनुष्यों को ज्ञान गंगा बहा कर बुद्धि व विवेक से जीवित करने के।' ब्रह्मा मुख से उच्चारित शिव के ज्ञानअमृत को सुनने व धारण करने वाले मनुष्य एक प्रकार से मृतप्राय: जीवन से नये रूहानी जीवन में चैतन्य हो उठते हैं। तो ब्रह्मा द्वारा बहायी गई ज्ञानगंगा से अमृत तुल्य जीवन प्राप्त होता है।

चित्त में बसी हैं मान्यताएँ व चिन्ता

चिन्ता अर्थात् ईश्वर से बिछड़ाव। ईश्वरीय सम्बन्ध में रहते कोई चिन्ताग्रस्त रहे, यह हो नहीं सकता। कहने को तो अलग-अलग धर्म के लोग अपनी-अपनी मान्यताओं के अनुसार ईश्वर की स्तुति करते हैं परन्तु उनका चिन्ताग्रस्त व तनावभरा जीवन यह दर्शाता है कि वे ईश्वर के यथार्थ स्वरूप से अनजान हैं और ईश्वर के प्रति स्वकल्पित, स्वरचित मान्यताओं को ही ईश्वर ठहरा रहे हैं। यह मान्य तथ्य है कि सन्तान को उसके माता-पिता द्वारा ही यह अहसास कराया जाता है कि वे उसके माता-पिता हैं, यह कभी नहीं होता कि सन्तान यह निर्णय करे कि उसका पिता कौन है। परन्तु भक्तों ने यह उद्घोषित किया हुआ है कि भगवान फलाना है और बाकी अन्य के भगवान कोरी कल्पना हैं। यही कारण है कि भक्तों के चित्त में भगवान नहीं बल्कि मान्यताएँ व चिन्ता बसती हैं। विकारों की अभिव्यक्ति भी चिन्ता के वातावरण में ही होती है। जिस घर में पारलौकिक पिता का ज्ञान व उससे सम्बन्ध का अनुभव होगा, वहाँ ये विकार देखने में नहीं आते। (क्रमश:)

बढ़ती डिग्रियां, घटते मूल्य

ब्रह्माकुमारी शकुन्तला, बहल (हरियाणा)

एक लड़की उच्च शिक्षा प्राप्त करके जब गृहस्थ में जाती है, तो एक नए परिवेश में उसका प्रवेश होता है या यूं कहें कि एक नई क्लास में दाखिला होता है। अब इस नई कक्षा में आवश्यक नहीं कि उसे घर की तरह बिस्तर पर चाय मिले, घर की तरह जब चाहे सोए और जब चाहे जागे। आवश्यक नहीं, जैसे घर में पापा का स्वभाव था वैसा ही ससुर का भी हो, जैसा भाभी का था वैसा जेठानी का भी हो। तो इस नई क्लास में उसे डिग्री चाहिए समायोजन करने की अर्थात् अडजस्ट होने की। लड़की के पास एमबीए की डिग्री है, अन्य भी कई डिग्रियां और डिप्लोमे हैं लेकिन प्रैक्टिकल लाइफ की परीक्षा में ये सब कागज वाली डिग्रियां काम नहीं आती हैं। ऐसे में धीरज, सहनशीलता, मधुरता, नम्रता, सम्मान आदि सद्गुणों का सर्टिफिकेट चाहिए लेकिन ये सब विषय उसके अध्ययन काल में पाठ्यक्रम में शामिल ही नहीं किए गए थे। कागज वाले प्रमाण-पत्रों को दिखा कर एक अच्छी नौकरी मिल सकती है, एक शिक्षित पति मिल सकता है लेकिन नौकरी का निर्वाह करते समय और पति के परिवार के साथ रहते समय तो इन्हीं मूल्यों की डिग्री की आवश्यकता पड़ती है। इनके अभाव में जीवन अंधकारमय लगने लगता है। कभी-कभी तो इतनी हिम्मत हार जाती है कि जीवन को ही समाप्त करने के विचार आने लगते हैं। कई मामलों में तो लड़की मायके आकर बैठ जाती है कि मेरे से ऐसे परिवार में निबाह नहीं हो सकता है।

जीवन-मूल्य छूट जाते हैं

पुराने समय में परिवार के बुजुर्ग दंपत्ति इतने पढ़े-लिखे नहीं होते थे लेकिन संयुक्त परिवार को एक सूत्र में पिरो कर रखते थे। परिवार की बहुएँ बुढ़ापे तक उनका सम्मान करती थीं, आज्ञा मानकर चलती थीं। आज हम अधिक पढ़-लिख गए हैं तो संयुक्त परिवार में रहना नहीं चाहते हैं इसलिए परिवार टूट रहे हैं। एकल जीवन में कई प्रकार की नकारात्मकता भर रही है। आज चारों ओर शिक्षा का उद्देश्य 'रोजगार परक शिक्षा' की गूंज सुनाई दे रही है। 'मूल्यपरक शिक्षा' इस कोलाहल में कहीं दब गई है। हम जैसा लक्ष्य विद्यार्थी को देंगे वैसे ही लक्षण उसमें आते जाएंगे। यदि लक्ष्य है कि येन-केन प्रकारेण अधिक से अधिक धन कमाना – तो विद्यार्थी-जीवन के दौरान ही योजनाएं बनने लगती हैं कि कौन-सा ऐसा बिजनेस है जिसमें समय कम लगे, मेहनत कम लगे और आमदनी अधिक को। ऐसी नौकरी हो जिसमें काम के घंटे कम से कम हों, छुट्टियां और पगार अधिक से अधिक हो। ऐसे शॉर्टकट रास्ते मिल भी जाते हैं, धन भी आ जाता है लेकिन जीवन-मूल्य छूट जाते हैं। यहां से सामाजिक व्यवस्था बिगड़ने लगती है।

नौकरी देने के तीन मानदंड

किसी को नौकरी देने के तीन मानदंड होते हैं। सबसे उत्तम है कि आपका मूल्यों के प्रति समर्पण कितना है? मध्यम है कि आपकी शिक्षा कितनी है? कनिष्ठ है कि आप रिश्वत कितनी दे सकते हैं? यदि शिक्षा की योग्यता के आधार पर भी नौकरी का चुनाव होता तो भी कोई बात नहीं थी लेकिन आज उत्तम और मध्यम दोनों ही योग्यताओं को ताक पर रखकर कनिष्ठ वाले की बल्ले-बल्ले हो जाती है। हम सब जानते हैं कि जीवन में धन-साधन प्राप्त हो जाना ही जीवन का या शिक्षा का उद्देश्य नहीं है लेकिन वह धन, सुख व शांति की नींद भी तो लेकर आए।

बदल गए मायने

जब पढ़े-लिखे नहीं थे तो गलत तरीके से धन उपलब्धि के अवसर को 'बच्चों की खातिर' (ऐसा धन बच्चों के संस्कार बिगड़ेगा) ठुकरा देते थे पर आज शिक्षित होकर उसी अवसर को 'बच्चों की खातिर' (केवल नपी-तुली नौकरी से बच्चों की परवरिश कैसे होगी) बड़ी खुशी से स्वीकार कर रहे हैं। शब्द तो आज भी वही बोलते हैं, हवाला तो आज भी बच्चों का ही दिया जाता है परंतु मायने बदल गए हैं। ■■■

शिक्षा एवं शिक्षित समाज

ब्रह्माकुमार सन्तोष, ज्ञानामृत, शान्तिवन

शिक्षा समाज की रीढ़ की हड्डी है। बिना शिक्षा के मनुष्य, नींव के बिना घर की तरह होता है। राष्ट्र अथवा समाज में शिक्षा को, व्यक्तित्व निर्माण तथा सामाजिक एवं आर्थिक प्रगति का मापदंड माना जाता है। निरक्षरता किसी भी समाज के लिए अभिशाप है। शिक्षा हमें लक्ष्य निर्धारित करने, सफलता प्राप्त करने और चुनौतियों से सामना करके आगे बढ़ने में सहायता करती है। आत्मविश्वास विकसित करने में भी शिक्षा का विशेष योगदान है। शिक्षित समाज की कल्पना अनेक विद्वानों, शिक्षाविदों एवं समाज सुधारकों ने की है। उनमें से बहुतों ने अपने विचारों के अनुरूप शिक्षा की रूपरेखा तैयार करके समाज के समक्ष रखी। उनका मानना था कि विद्या एक ऐसा धन है जिसे ना तो कोई चुरा सकता है, ना छीन सकता है, और ही यह बांटने से बढ़ता है। बहुत से महापुरुषों ने तो अपना सम्पूर्ण जीवन ही इसी कार्य में लगा दिया।

शिक्षा का महत्व

शिक्षा इंसान का पहला और सबसे महत्वपूर्ण अधिकार है। राष्ट्रपिता महात्मा गांधी जी का मानना था कि विश्व में शान्ति के लिये शिक्षा जरूरी है (If we want to reach real peace in this world, we should start educating children)। उनका मानना था कि शिक्षा के अभाव में एक स्वस्थ समाज का निर्माण असम्भव है। ऑस्ट्रेलिया की पूर्व प्रधानमंत्री सुश्री जूलिया गिलार्ड ने कहा था, शिक्षा शान्ति, सुरक्षा और आर्थिक समृद्धि के लिए एक निवेश की तरह है, जिसे हमें दुनिया के सभी लोगों तक पहुंचाना चाहिये। जी.के. चेस्तेरसन का मानना था कि शिक्षा हमारे समाज की आत्मा है जो कि एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी को दी जाती है। महर्षि अरविन्द के अनुसार, शिक्षा का प्रमुख लक्ष्य विकासशील आत्मा के सर्वांगीण विकास में सहायक होना तथा उसे उच्च आदर्शों के लिए प्रयोग हेतु सक्षम बनाना है। शिक्षा द्वारा व्यक्ति की अन्तर्निहित बौद्धिक एवं नैतिक क्षमताओं का सर्वोच्च विकास.होना चाहिए। सी.एस. लेविस के अनुसार, सिद्धान्तों के बिना शिक्षा, एक मनुष्य को चालाक दैत्य बनाने जैसा है। आचार्य चाणक्य ने कहा था, शिक्षा सबसे अच्छी मित्र है, शिक्षित व्यक्ति सदैव सम्मान पाता है, शिक्षा की शक्ति के आगे युवा शक्ति और सौंदर्य दोनों ही कमजोर हैं परन्तु जिस शिक्षा से हम अपना जीवन निर्माण कर सकें, मनुष्य बन सकें, चरित्र गठन कर सकें और विचारों का सामंजस्य कर सके, वही सच्ची शिक्षा होती है।

प्राचीन काल से ही भारत शिक्षा के महत्व के प्रति जागरूक रहा है। वैदिक युग से, गुरुकुल में शिक्षा का प्रचलन रहा है। अखण्ड भारत में विश्व के प्रथम विश्वविद्यालय तक्षशिला का निर्माण 6ठी से 7वीं सदी ईसा पूर्व के मध्य हुआ था जहाँ पर अध्ययन करने के लिए विश्व भर से विद्यार्थी आते थे। भारत में ही दुनिया के एक अन्य प्राचीन विश्वविद्यालय जिसे नालंदा विश्वविद्यालय के नाम से जाना जाता है, का निर्माण हुआ था। आधुनिक तकनीकी संसार में भी व्यक्तिगत उन्नति, सामाजिक स्वास्थ्य में सुधार, आर्थिक प्रगति, राष्ट्र की सर्वांगीण उन्नति, सामाजिक मुद्दों के बारे में जागरूकता और पर्यावरण की समस्याओं को सुलझाने में शिक्षा बहुत सहायक है।

शिक्षा का प्रचार-प्रसार

शिक्षा हमारे विचारों में परिपक्वता लाती है और बदलते परिवेश के साथ तालमेल बना कर चलना सिखाती है। इसलिए विश्व के लगभग सभी देशों ने शिक्षा के प्रचार एवं प्रसार के लिए अपने-अपने स्तर पर प्रयास किये हैं। भारत में शिक्षा के प्रचार एवं प्रसार के लिए सरकार द्वारा अनेकों प्रयत्न समय-समय पर किये जा रहे हैं। भारत में अन्य देशों की तुलना में शिक्षित लोगों का प्रतिशत काफी कम है। इंग्लैंड, रूस तथा जापान में लगभग शत-प्रतिशत जनसंख्या साक्षर है। यूरोप एवं अमेरिका में साक्षरता का प्रतिशत 90 से 100 के बीच है जबकि भारत में साक्षरता का प्रतिशत 79.38 है। भारत में शिक्षा प्रणाली को 3 भागों में बांटा गया है। 1. प्राथमिक शिक्षा, 2. माध्यमिक शिक्षा, 3. उच्च माध्यमिक शिक्षा। केन्द्र और राज्य सरकारों द्वारा किए गए प्रयत्नों के फलस्वरूप देश की 94 प्रतिशत आबादी को एक किलोमीटर के दायरे में कम से कम एक प्राथमिक विद्यालय और 84 प्रतिशत ग्रामीण आबादी को तीन किलोमीटर के दायरे में एक उच्च प्राथमिक विद्यालय उपलब्ध कराया गया है। उच्च शिक्षा की दृष्टि से भी देश प्रगति की ओर अग्रसर है।

आजकल बड़े शहरों में प्ले स्कूल भी अधिक संख्या में खुलते जा रहे हैं जहाँ छोटे-छोटे बच्चों को खेल-खेल में शिक्षा दी जाती है। एक आंकड़े के मुताबिक भारत में प्रतिमाह लगभग 10 से 12 नये स्कूल खोले जा रहे हैं एवं शिक्षा के स्तर में भी काफी उन्नति की जा रही है। राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद् (NCERT) द्वारा भी समय-समय पर शिक्षा नीति में संशोधन किया जा रहा है। कई प्राइवेट स्कूलों (गैर-सरकारी विद्यालयों) में अन्तर्राष्ट्रीय स्तर की शिक्षा दी जा रही है ताकि विद्यार्थी विश्व के किसी भी देश में आगे की पढ़ाई जारी रख सके।

क्यों पथ-भ्रष्ट है आज की युवा पीढ़ी?

भारत में दूसरे देशों से ज्यादा युवा बसते हैं और 75% से अधिक युवा पढ़े-लिखे हैं। प्रश्न यह उठता है कि शिक्षा का इतना प्रचार-प्रसार होने के बाद भी आज का विद्यार्थी क्यों पथ-भ्रष्ट है? एक सर्वेक्षण के अनुसार, नशा करने वाले युवाओं में अधिकांश पढ़े-लिखे होते हैं। विश्व में व्याप्त लगभग सभी नकारात्मक कार्यों जैसे आतंकवाद, भ्रष्टाचार, आत्महत्या, नशे का सेवन, देश विरोधी गतिविधियाँ आदि में पढ़े-लिखे युवाओं को अधिक संलग्न पाया गया है। निरन्तर नकारात्मक सोच से आज का युवा न सिर्फ अपने जीवन के स्वर्णिम पलों को खत्म कर रहा है बल्कि अपने ऊँचे संस्कारों और देश एवं परिवार के प्रति अपने कर्त्तव्यों से बेमुख हो रहा है। युवाओं के पथ-भ्रष्ट होने के निम्नलिखित मुख्य कारण हैं --

1. घर-परिवार :

घर शिक्षा प्राप्त करने का पहला स्थान है। अभिभावक.पहले शिक्षक होते हैं। शिक्षा का पहला पाठ घर पर विशेष रूप से माँ से प्राप्त होता है। देखने में आता है कि आज अधिकांश घरों में आपसी तनाव एवं झगड़े होते रहते हैं। माँ-बाप के मध्य होने वाले लड़ाई-झगड़े का बच्चों पर बहुत ही बुरा प्रभाव पड़ता है। अभिभावकों द्वारा, विशेष रूप से पिता द्वारा किये जा रहे नशे (शराब, सिगरेट, तम्बाकू) का बच्चे के मन में गहरा नकारात्मक असर होता है जिस कारण बचपन से ही उसके मन में गलत विचारधारा पनपने लगती है जो कि आगे चल कर उसका व्यक्तित्व बन जाती है। इसलिये अभिभावकों का यह परम कर्त्तव्य बनता है कि वे अपने बच्चों को नैतिकता का पाठ पढ़ाएं, जिससे उन्हें अच्छे संस्कार मिलें। अच्छे संस्कार होंगे तो वे अच्छे और बुरे का फर्क जान पाएंगे। यदि घर में रोजाना अच्छे संस्कारों की बात होगी तो बच्चे नैतिक मूल्य व संस्कारों के प्रति सजग रहेंगे। स्वामी विवेकानन्द ने कहा था कि हमें ऐसी शिक्षा चाहिए जिससे चरित्र का निर्माण हो, मन की शान्ति बढ़े, बुद्धि का विकास हो और मनुष्य अपने पैरों पर खड़ा हो सके। भारत के पूर्व राष्ट्रपति स्वर्गिय ए.पी.जे. अब्दुल कलाम ने कहा था कि आप अपना

भविष्य नहीं बदल सकते पर अपनी आदतों को बदल सकते हैं और बदली हुई आदतें एक दिन आपका भविष्य बदल देंगी।

2. संगदोष :

कहावत है कि जैसा संग वैसा रंग। ईश्वर ने मनुष्य को एक अलग ही शक्ति दी है सोचने और समझने की शक्ति। परन्तु देखा गया है कि युवा अधिकतर गलत संगत की ओर सहज आकर्षित हो जाता है और उस कुसंग के रंग में रंगकर संस्कारों व नैतिकता को छोड़ संस्कारविहीन होने लग जाता है। ऐसे में वह समाज, परिवार, देश एवं अपने कर्त्तव्यों के प्रति जागरूक नहीं रह पाता और पथ-भ्रष्ट हो जाता है। इसलिए अपने संग का चयन एवं सम्भाल करना प्रत्येक युवा की जिम्मेवारी है। कहा गया है कि संग तारे, कुसंग बोरे।

3. लक्ष्य विहीनता:

आज का युवा अपने लक्ष्य को निर्धारित करने में असक्षम है, अधिकतर युवा लक्ष्यविहीन हैं, जिसके कारण कठिन परिश्रम भी निरर्थक है क्योंकि रास्ते से भटक कर कभी मंजिल को नहीं पा सकते। अपना भविष्य निर्धारित करने में तथा अपना प्रेरणास्त्रोत चयन करने में असक्षम हैं इसलिए उनका मन स्थिर नहीं रह पाता। युवा मन बाहरी संसार की चमक-दमक से प्रभावित हो कर उस ओर आकर्षित होता है तथा ऐसे मार्ग पर चलने वालों को ही अपना प्रेरणास्त्रोत बना लेता है। सिनेमा के पर्दे पर दिखने वाले बनावटी नायक (हीरो), आतंकवादी, उग्रवादी, नक्सलवादी को ही असल जिन्दगी का हीरो मान कर उनका अनुसरण करके अपने को उस मार्ग की ओर अग्रसर कर अपना सम्पूर्ण जीवन अन्धकार में डाल रहा है। बाहरी दिखावटों, बनावटी चमक-दमक तथा पाश्चात्य संस्कृति के प्रभाव में आकर उसकी हिम्मत, जोश, दृढ़ संकल्प, जुनून, एकाग्रता, इच्छाशक्ति और धैर्यता जैसे गुण वासना तथा अश्लीलता, नशा, हिंसा तथा लोभ-लालच के अधीन होते जा रहे हैं। इसलिये युवाओं को अपना भविष्य, अपने जीवन का लक्ष्य एवं अपना प्रेरणास्त्रोत चयन करने में सावधानी बरतनी चाहिए एवं वास्तविक जीवन के हीरो अर्थात् चरित्रवान और कर्मठ को ही अपना आदर्श बनाना चाहिए।

4. सुगम मार्ग (Short cut) की तलाश :

आज जब हम अपनी प्राचीन सभ्यता, संस्कृति एवं परम्पराओं को भूल कर भौतिकवादी सभ्यता का अंधानुकरण कर रहे हैं, ऐसे में ज्यादातर युवा सफलता पाने के लिए सुगम मार्ग तलाशते हैं भले ही वो मार्ग अनैतिक, अराजक या अवैध हो। अधीरता अनैतिकता की जननी है। धैर्य की कमी के कारण कम परिश्रम में अधिक सफलता जल्द से जल्द पाने की चाह में शॉर्टकट मार्ग पर अग्रसित हो जाता है। अधीरता के कारण, उसके द्वारा किया गया सुगम मार्ग का चयन अक्सर उसे अपराध के मार्ग पर ले जाता है इसलिए युवाओं को चाहिए कि वे अपना उज्जवल भविष्य चयन करने में मेहनत और लगन का सहारा लें, न कि अनैतिक सुगम मार्ग का।

5. नैतिक मूल्यों का पतन :

मनुष्य के अन्दर मानवीय मूल्यों का विकास करना ही शिक्षा का मुख्य उद्देश्य है। वो शिक्षा अनमोल है जो मानवीय मूल्यों को महत्व दे। परन्तु आज की इस भागती-दौड़ती जिन्दगी में शिक्षा भी उसी रूप में परिवर्तित हो चुकी है। नैतिक शिक्षा प्राय:लोप सी हो गयी है। आज शिक्षा एक व्यापार बन कर रह गयी है। बच्चों के बाल मन में असुरक्षा, प्रतिस्पर्धा जैसे भाव उत्पन्न किये जा रहे हैं। आधुनिक शिक्षा प्रणाली में नैतिक शिक्षा का कोई स्थान ही नहीं रहा जबकि आज के भौतिकवादी समाज में नैतिक शिक्षा बहुत ही जरूरी है। नैतिक शिक्षा से ही हमारे अन्दर नैतिक गुणों का उत्थान होगा। व्यक्ति का बौद्धिक और चारित्रिक उत्थान केवल नैतिक शिक्षा से ही सम्भव है। आज शिक्षित युवाओं में बढ़ती अपराध प्रवृत्ति का मुख्य कारण है नैतिक शिक्षा का अभाव। शिक्षा और नैतिक शिक्षा, इन दोनों का

सामंजस्य युवाओं के सर्वांगीण विकास के लिए अत्यन्त जरूरी है। शिक्षा यदि सफलता की चाबी है तो नैतिक शिक्षा सफलता की सीढ़ी है। एक के अभाव में दूसरे का पतन निश्चित है। इसलिए माँ-बाप को घर में और शिक्षकों को विद्यालयों में, बच्चों को नैतिक शिक्षा का पाठ जरूर पढ़ाना चाहिए।

जीवन भी एक पाठशाला है :

स्कूल-कॉलेज से हम किताबी ज्ञान, लिपियों का ज्ञान पाते हैं, घर-परिवार से हम अच्छे-बुरे संस्कारों का ज्ञान पाते हैं लेकिन इन सब से अलग है जीवन रूपी पाठशाला। विपरीत परिस्थितियों में खुद को समर्थ बनाये रखना, मुश्किलों से लड़ना और जीत पाना, विपदा से घबराये बिना निरन्तर आगे बढ़ना, ये सब हमें जीवन रूपी पाठशाला से सीखने को मिलता है। जैसे विद्यालय में एक-एक कक्षा को उत्तीर्ण करते हुए हम धीरे-धीरे आगे बढ़ते हैं और उच्च शिक्षा को प्राप्त करते हैं ठीक वैसे ही जीवन में आने वाली प्रत्येक बाधाओं को एक-एक कर पार करके हम स्वंय को उत्तम बना पाते हैं। लिपियों का ज्ञान हमें रोजगार दिलाने में सहायता करता है परन्तु जीवन की पाठशाला से मिली शिक्षा उम्र भर हमें मदद करती है।

पुराने जमाने में लिपियों का ज्ञान बहुत कम लोगों को था परन्तु वे साधरण ज्ञान से भरपूर थे। शिक्षा का अनुमान व्यक्ति के आचरण-व्यवहार एवं चाल-चलन से लगाया जाता था। उत्तम व्यवहार वाले व्यक्ति को शिष्ट या शिक्षित समझा जाता था भले ही उसे लिपियों का ज्ञान न भी हो। लोग कहते थे कि फलां व्यक्ति बहुत ही शिक्षित लगता है। इसके विपरित, उच्च शिक्षा प्राप्त व्यक्ति का यदि आचरण-व्यवहार ठीक न हो तो लोग उसे अशिक्षित मानते थे। उसे पढ़ा-लिखा गंवार कहा जाता था अर्थात् पढ़-लिख के भी वो अनपढ़ जैसा ही है। अत: वास्तविक शिक्षा वो है जो व्यक्ति के चरित्र का निर्माण करे क्योंकि चरित्रवान व्यक्ति ही एक अच्छे, सभ्य और शिक्षित समाज का निर्माण कर सकता है, विश्व में शान्ति और सद्भावना स्थापन कर सकता है। चरित्र निर्माण से ही बेहतर विश्व का निर्माण हो सकता है इसलिए नैतिक शिक्षा और चरित्र निर्माण पर विशेष ध्यान आवश्यक है। हम आशा करते हैं कि भारत सरकार की नई शिक्षा नीति उपरोक्त मानकों पर खरी उतरेगी और देश स्वर्णिम युग की ओर अग्रसर होगा। ■■■

श्री कृष्ण का आह्वान पृष्ठ 3 का शेष भाग

अत: आज आवश्यकता है नव चेतना की, अपने जीवन के नव निर्माण की, अपने प्राणों में नव प्राण की, अपने घर-गृहस्थ में नये विधि-विधान की, नये एवं उज्ज्वल विचारों की, जीवन में नई उमंग, नई तरंग पैदा करने वाली एक नई तान की। तब यहाँ नई ज़मीन और नया इन्सान बनेगा, नई दुनिया और नया जहान बनेगा। उस नये विमान में नये तरीके से श्री कृष्ण का शुभागमन होगा, सुखद आगमन होगा, स्वर्गिक शासन होगा।

ऐसी जन्माष्टमी मुबारक!

उस जन्माष्टमी के लिए हम आपको अग्रिम बधाइयाँ कहते हैं। द्वापर युग से लेकर अब तक आप जिस प्रकार जन्माष्टमी मनाते आये हैं, वह कोई प्रैक्टिकल मनाना नहीं था। परन्तु अब जब भारतवासी सच्चे गीता-ज्ञान की बंसी सुनकर आनन्द रस में मस्त होंगे और राजयोग द्वारा योगीराज बनेंगे तब निश्चय ही निकट भविष्य में श्री कृष्ण का पावन एवं दैवी जन्म होगा। वह होगी श्री कृष्ण की वास्तविक एवं सजीव झांकी। वह होगी सोने की द्वारिका। वह होगा वैकुण्ठनाथ का सुखद वैकुण्ठ अथवा क्षीर सागर। उस 'सुन्दर' एवं मनमोहक झांकी को देखने के योग्य बनने के लिए अभी अपनी दृष्टि को दिव्य जन्म देना होगा, स्वयं को ज्ञान-योग के चन्दन से तिलक देना होगा। इस शुद्ध पुरुषार्थ को यदि हम करने की प्रेरणा इस बार की जन्माष्टमी से लेंगे तो निश्चय ही यह जन्माष्टमी हमारे लिए स्वर्गारोहण के लिए सोपान सिद्ध होगी। ऐसे शुभ पुरुषार्थ के लिए, ऐसी शुभ जन्माष्टमी के लिए एक बार फिर अग्रिम बधाइयाँ। ■■■

अनोखे कोच और कप्तान

■■■ ब्रह्माकुमारी पूजा, सोडाला, जयपुर

हाथ में बैडमिंटन लिए हुए, बाबा की एक तस्वीर देखने पर ऐसा लगा कि इतने वर्षों से जिस कोच को मैं ढूँढ़ रही थी वो मिल गया। साकार में नहीं मिला, फिर भी फोटो से ही महसूस हुआ कि जीवन रूपी खेल को कोचिंग देने वाला यही एक कोच है। भारत में हर वर्ष 29 अगस्त को खेल दिवस के रूप में मनाया जाता है। ये दिन हॉकी के जादूगर के नाम से प्रख्यात, हॉकी के महान खिलाड़ी मेजर ध्यानचन्द जी का जन्म दिवस है। सम्पूर्ण मानव जीवन भी एक खेल है, इस संसार रूपी मैदान पर सारी आत्माएँ अलग-अलग खेल खेल रही हैं और इस खेल में सबको अपना बनाने में बाबा नम्बरवन जादूगर हैं। ऐसी जादूई दृष्टि जो एक सेकण्ड में आत्माएँ सब कुछ भूल उनके प्यार में खो जाती हैं।

शिवबाबा हमारे कोच हैं और ब्रह्मा बाबा कप्तान हैं। जब रूहानी ओलिंपिक का युग अर्थात् संगमयुग शुरू होता है तब ये कोच और कप्तान पूरे 5000 वर्ष के बाद मिलते हैं। जन्म-पुनर्जन्म रूपी बाजोली के खेल में ब्रह्मा बाबा ने बाजी मार ली। उनकी सबसे बड़ी विशेषता थी, दूसरों को जिताना। दूसरों को हराना तो सहज है लेकिन जिताना मुश्किल है इसलिए साकार में बाबा बच्चों के साथ बैडमिंटन खेलते हुए जीत सकते थे परन्तु जानबूझकर हार जाते थे और कहते थे कि बच्चे, अब तक हारते ही आये हो, अब बाबा आया है जीत दिलाने। जीवन में कितनी बाधाओं को पार करते हुए आखिर में ब्रह्मा बाबा ब्रह्माण्ड के चैम्पियन बन ही गये।

SPORTS (खेल) का अर्थ है –

S - Silence (शान्ति), P - Pateince (धैर्य), O - Obedient (आज्ञाकारी), R- Regular (नियमित), T - Tireless (अथक), S - Self-confidence (आत्मविश्वास)

ये सारी बातें बाबा में थीं। उन्होंने खेल की भावना को जंग की भावना में परिवर्तित नहीं होने दिया। जैसे क्रिकेट की कोई भी गेंद बल्लेबाज के लिए आखिरी हो सकती है वैसे ही जीवन की कोई भी घड़ी अन्तिम घड़ी हो सकती है। इसी पर अटेन्शन रखते हुए बाबा ने हर घड़ी हो सफल किया। इसलिए इस ओलिंपिक के वे गोल्ड मेडलिस्ट बने। यहाँ कलियुगी दुनिया में गोल्ड का केवल मैडल मिलता है और अलौकिक खेल में गोल्ड की दुनिया के मालिक बाबा बनेंगे।

अलौकिक ओलिंपिक का गोल्ड मैडल प्राप्त करने में बाबा के साथ अष्ट रत्न भी हैं। सिल्वर मैडल अर्थात् जो 16108 में आने वाले हैं और सतयुग में आने वाली 9 लाख आत्माओं को कांस्य पदक प्राप्त होगा। हमें चेक करना है कि हमारा नम्बर किसमें है? खबरदार रहना है कि हमारा कोई कर्म ऐसा न हो जो हमें इस ओलिंपिक से डिसक्वालिफाइ करवा दे। ऐसा कोच और कप्तान हमें मिला है कि कोई भी टीम हमें हरा नहीं सकती। ऐसा कोच और कप्तान अन्य किसको मिलेगा?

दिल यही सोचता है कि क्या ये ड्रामा के दिन हमेशा के लिए चले जायेंगे? ऐसा कोच और कप्तान जो गलती होने पर भी हीन शब्दों का इस्तेमाल न करें। हमारे उमंग-उत्साह को हमेशा बढ़ायें। इतने उल्लास भरे बोल बोलते हैं कि हारी हुई आत्माएँ भी विजयी बन जाती हैं। कितने भाग्यवान हैं हम जो इतना मनोबल बढ़ाने वाले कोच और कप्तान मिले। दिल से शुक्रिया कोच और कप्तान का। ■■■

बीती को याद करना माना खुद ही खुद को सजा देना

■■■ ब्रह्माकुमार विनायक, सोलार प्लान्ट, शान्तिवन

कई लोग ऐसे होते हैं, जो बीती हुई बातों को भूलते ही नहीं। दुख, अपमान, मन-मुटाव, हार-जीत, लगाव-टकराव की बातों को बार-बार याद भी करते हैं और उतने ही दुखी भी होते हैं जैसे कि फिर से वह घटना घट रही है। जीवन माना ही सुख-दुख का खेल है। लेकिन, सुख भी दुख में तब बदल जाता है जब सुख के दिनों में भी दुख के दिन याद आते हैं। आधी जिंदगी दुख में बीती और आधी उस दुख की याद में बीती तो सुख रहा ही कहाँ? पर मनुष्य समझता नहीं है। जैसे तम्बाकू, शराब आदि मादक वस्तुओं का व्यसन लगता है वैसे ही बार-बार दुखी होना भी एक भयानक व्यसन है। इस से छुटकारा पाने के लिए निम्नलिखित कुछ वास्तविक बातों पर ध्यान देना जरूरी है।

क्या आप अपने पिछले या अगले जन्म को जानते हो?

हम आत्माएँ जन्म-मरण के चक्र में शरीरों को बदलते रहते हैं लेकिन आश्चर्य इस बात का है कि नया जन्म लेने के बाद पिछले जन्म की एक भी बात हमें याद नहीं रहती है, न संबंधियों की, न स्थान की, न ही घटनाओं की। पिछले जन्म के माँ-बाप, भाई-बहन आदि अगर सामने आ भी जाएँ तो भी हम उनको पहचान नहीं सकते हैं। जरा सोचिए, पिछले जन्म की बातें याद नहीं, अगले जन्म में हम कहाँ रहेंगे, पता नहीं और अगला जन्म लेने के बाद इस जन्म की बातों का भी नामनिशान नहीं। यह भूलने की प्रक्रिया सृष्टिनाटक की एक अनिवार्य और यथार्थ विधि है। जब जन्म-जन्मांतर की लाखों बातें भूल चुके हैं तो फिर इस जन्म की दो-चार बातों को पकड़ कर जिंदगी को बरबाद क्यों करें?

बीती को याद करना माना भूत का प्रवेश होना

भूत एक अप्रिय शब्द है। भूत से पीड़ित घर में रहना लोग पसंद नहीं करते। जिनमें भूत का प्रवेश होता है उनसे सभी दूर भागते हैं। कितना भी प्रिय व्यक्ति क्यों न हो, मरने के बाद अगर भूत बनता है तो उसको भगाने के लिए सभी प्रकार की कोशिशें की जाती हैं। भूत से पीड़ित व्यक्ति बहुत दुखी और परेशान रहता है क्योंकि उसके मन-बुद्धि और शरीर को भूत अपने नियंत्रण में ले लेता है। भूतकाल को याद करना भी भूत के प्रवेश होने जैसा ही है। बीती को याद करने वाला वर्तमान को छोड़ भूतकाल में जीना शुरू कर देता है जिससे उसका वर्तमान शून्य हो जाता है। भविष्य का आधार है वर्तमान। जब वर्तमान ही शून्य रहेगा तो भविष्य कैसे उज्ज्वल बनेगा? छोटे बच्चे को अगर पिछले जन्म की याद आती रहे तो उसको भुलाने के सारे प्रयत्न किये जाते हैं क्योंकि उन यादों के दबाव में उसको वर्तमान के सुख की महसूसता ही नहीं होगी। बीती बातों की याद हमें वास्तविकता से दूर भ्रमलोक में ले जाती है जहाँ भविष्य का अस्तित्व ही नहीं है।

समस्या का समाधान नहीं है

जिस व्यक्ति ने हमें दुख दिया उसको बार-बार याद करना, यह समस्या का समाधान नहीं है बल्कि समस्या

को और बढ़ावा देना है। बीती बातों से मन अशांत होकर समस्या का समाधान करने की क्षमता खो बैठता है जिससे कई और नई-नई समस्याएँ खड़ी हो जाती हैं। समाधान का उद्भव हमेशा शांत मन में होता है। शांति एक महान शक्ति है जिसमें अन्य कई शक्तियाँ समाई हुई हैं जो समस्या का समाधान करने वाली होती हैं।

आयु की बरबादी

जीवन को सफल बनाने के लिए हमें कितना समय मिला है? आज मनुष्य की औसत आयु है 60 वर्ष। आरंभ के बीस साल पढ़ाई, लड़ाई, हँसने-रोने में चले जाते हैं। जिंदगी की शुरुआत होती है 20वें साल से, जब विवेक जागृत होता है। पचास से साठ तक होती है बीमारियों के साथ लड़ाई। अस्पताल में लाइन लगाओ, खून की जांच कराओ, ऑपरेशन कराओ, दांत निकलवाओ, मोतियाबिंदु हटवाओ, वजन कम करो, ये मत खाओ, वो मत खाओ, इन बातों को समय देते-देते विदाई का वक्त कब आकर खड़ा हो जाता है, पता भी नहीं चलता। अब बचे 20 से 50 वर्ष तक यानी 30 साल। उनमें से रोज 8 घंटे अर्थात् 30 में से दस साल नींद में चले जाते हैं। हम समझ बैठे हैं कि हम सौ साल जीयेंगे लेकिन कटु सत्य यह है कि जीवन को सफलता की ओर ले जाने के लिए हमारे हाथ में मात्र 20 साल ही हैं। उनमें भी कब, कैसे, किस रूप में मौत सामने आकर खड़ी हो जाए, कोई भरोसा नहीं। अब बताइए, बची हुई इतनी कम आयु को भी बीती बातों को घोटते हुए बरबाद कर देना, क्या यह समझदारी है?

दुआ लेने और देने से वंचित

मनुष्य जीवन की शान है दुआएँ देना और दुआएँ लेना। अगर यह शान नहीं है तो मनुष्य और जानवर के बीच फरक ही नहीं रहता है। दुआ देने या पाने की शक्ति के कारण ही मनुष्य अन्य जीव-जंतुओं से श्रेष्ठ माना जाता है। दुआओं का दरवाजा खोलने की चाबी है क्षमा। किसी को दुआ देनी है या उससे दुआ लेनी है तो सबसे पहले उस द्वारा किए गए कटु व्यवहार को क्षमा करना होगा। क्षमा तब कर सकते हैं जब हम बीती बातों को याद करना बन्द कर देते हैं। जैसे भूत किसी में प्रवेश कर उसकी जिंदगी बनने नहीं देता वैसे ही भूतकाल की बातें हमें इन्सान बनने नहीं देंगी अर्थात् दुआ देने या लेने से वंचित बना देंगी।

बीमारियों का बीज

मानसिक चिकित्सा देते समय मरीज को सबसे पहले बीती बातों के जाल से निकाल कर वर्तमान में लाने की कोशिश की जाती है। असफलता, अपमान और अविश्वास से संबंधित बीती बातों को स्मृति में रखने से मानसिक तनाव बढ़ता है। इससे कॉर्टिसाल नाम का एक हार्मोन अधिक प्रमाण में स्रावित होता है जिससे उच्च रक्तचाप, चिड़चिड़ापन, स्नायु व हड्डी की कमजोरी, बढ़ती दिल की धड़कन – इन बीमारियों का शिकार होना पड़ता है। दुख भरी यादें, सहन करने और समाने की शक्ति को कमजोर कर देती हैं। इन शक्तियों की कमी के कारण डिप्रेशन नाम की मानसिक बीमारी पैदा होती है जो अनेक प्रकार के रोगों की जड़ है। कहा जाता है, खुशी जैसी खुराक नहीं। मन जब खुश रहता है तब मस्तिष्क से एन्डोर्फिन, सेरेटोनिन और डोपामाईन नामके हार्मोन्स का स्राव होता है जो मन की खुशी को शरीर के एक-एक जीवकोश तक पहुंचाकर तंदुरुस्ती बना कर रखते हैं। लेकिन, खुशी तब उत्पन्न हो जब भूतकाल की विस्मृति हो।

मुझे.दुख मिलने का कारण क्या था?

कारण है मेरा कर्म। सर्वशक्तिमान परमपिता शिव परमात्मा के बाद इस सृष्टि नाटक में दूसरा शक्तिशाली घटक है कर्म। कहा जाता है, जैसी करनी वैसी भरनी। अच्छे कर्म का फल है सुख-शांति व प्रशंसा और पाप कर्म का फल है दुख-अशान्ति व निंदा। पाप कर्मों का फल, व्यक्ति, स्थान या परिस्थिति के द्वारा मिलता है। अपराधी यह नहीं कह

सकता है कि मुझे जो सजा मिली है उसका कारण यह पुलिस, वकील या न्यायाधीश है। वे केवल सजा सुनाने के निमित्त बने, न कि सजा के कारण। सजा का कारण तो वह पाप कर्म था जो अपराधी ने किया था। वैसे ही जिन्होंने भी हमें दुख दिया है वे तो केवल निमित्त बने पर दुख के कारण नहीं थे। हमारे ही पाप कर्मों का बोझ वास्तव में दुख मिलने का कारण है। उसकी सजा किसी न किसी के माध्यम से मिलनी ही थी और मिल भी गयी। उसको बार-बार याद करते रहना, यह जैसे कि पूरी हुई सजा को फिर से लागू करते रहना है।

आध्यात्मिक साधक के लिए घातक पिंजरा

मन और बुद्धि को शिवपिता परमात्मा की तरफ केन्द्रित करके उनके ज्ञान, गुण और शक्तियों को स्वयं में धारण करना, यह है मुख्य साधना। इस साधना को निरंतर जारी रखने के लिए विकारी, साधारण व व्यर्थ बातों के आक्रमण से मन और बुद्धि को सुरिक्षत रखना जरूरी है। लेकिन, कई बार किसी के कटुवचन या दुर्व्यवहार को देखकर मन में छोटा-सा प्रश्न उठता है कि इसने ऐसा क्यों किया? साथ-साथ दुख और विरोध की भावनाएँ न चाहते हुए भी उत्पन्न हो जाती हैं। जैसे एक कीड़े ने साँप बनकर राजा परीक्षित के प्राण हर लिए, वैसे ही यह छोटा-सा प्रश्न बड़े-से साँप का रूप धारण कर लेता है। उन बातों की याद मन व बुद्धि को ऐसे घेर लेती है जैसे कि पिंजरा। पिंजरे के पंछी को आकाश भूल जाता है और बीती बातों के पिंजरे में साधक को अपनी साधना का मूल उद्देश्य भूल जाता है। शिवपिता को निरंतर याद करने के लिए मन और बुद्धि को इस देह की दुनिया से ऊपर शान्तिधाम तक ले जाना पड़ता है लेकिन पिंजरे का पंछी उड़े कैसे?

बीती बातों के बंधन से बाहर कैसे निकलें?

कोई भी आदत या संस्कार बनने के बाद उससे छुटकारा पाना कठिन हो जाता है। बातों को पकड़ कर दुखी होते रहना, यह भी एक कड़ा संस्कार है, जो बार-बार मन-बुद्धि को दुख की तरफ खींचता रहता है। इससे मुक्त होने के लिए चाहिए वास्तविकता की गहरी महसूसता और साथ-साथ मंजिल तक पहुंचने की दृढ़ता। वास्तविकता यही सिखाती है कि इस सृष्टि-नाटक में मैं एक स्वतंत्र अभिनेता हूँ, मुझे मेरी भूमिका को श्रेष्ठ बनाना है। मेरा यही सपना है कि हर श्वास, हर संकल्प को साधना में सफल कर मंजिल तक पहुंचना ही है। बीती बातों में ही उलझा रहूँ तो न साधना रही, न ही मंजिल। इसलिए मेरी भूमिका की श्रेष्ठता के लिए भूतकाल को विदाई देनी है, वर्तमान को साधना में सफल करना है और भविष्य को उज्ज्वल बनाना है। यह अंदरूनी जागृति विकसित होते ही एक ही क्षण में हम बीती के पिंजरे से छूटकर उड़ता पंछी बन जाएँगे।

ज्ञान और योग से सशक्तिकरण

इस महसूसता को जीवन में अमल में लाने के लिए जो शक्ति चाहिए, वह मिलती है ईश्वरीय ज्ञान के मंथन और सहज राजयोग के अभ्यास से। ज्ञान यह सिखाता है कि विकारी, व्यर्थ और साधारण कर्म से मुक्त रह समर्थ व्यक्तित्व कैसे अपनाएँ अर्थात् ज्ञान, गुण और शक्तियों से जीवन को संपन्न कैसे बनाएँ? सहज राजयोग सिखाता है, परमपिता शिव परमात्मा, जो हम सब के पिता हैं, उनके साथ सर्व संबंध कैसे निभाएँ? उनकी याद से स्वयं को पूर्वजन्मों के पापों से मुक्त कैसे बनाएँ? अष्टशक्तियाँ, जो सहज राजयोग से प्राप्त होती हैं, उनके प्रयोग से बार-बार सताने वाली बातों को आसानी से पूर्णविराम लगा सकते हैं, समाधान भी दे सकते हैं।

ज्ञान व योग को नित्य जीवन में प्रयोग में जो लाता है उसको आंखों के सामने सदा दो ही चीजें दिखती हैं। एक आंख में शिवपिता की निरंतर स्मृति अर्थात् सफल वर्तमान और दूसरी आंख में स्वयं की संपन्न स्थिति अर्थात् उज्ज्वल भविष्य। वह व्यक्ति बीती यादों से संपूर्ण मुक्त होकर, सुख स्वरूप, आनंद स्वरूप जीवन जीने की कला अपनाता है। ■■■

श्रेष्ठ भाग्य-निर्माण का आधार त्याग

ब्रह्माकुमार शुभ्र, दुर्गापुर (पश्चिम बंगाल)

संसार में हरेक व्यक्ति को इच्छा रहती है कि उसका भाग्य अच्छा हो और इसके लिए कई प्रकार के प्रयत्न भी करता है। जो व्यक्ति लक्ष्य प्राप्ति में सफल हो जाता है, उसके लिए साधारण रूप से कहा जाता है कि यह भाग्यशाली है किन्तु उस व्यक्ति के भाग्यशाली होने का राज है नकारात्मकता का त्याग। अत: भाग्य निर्माण का आधार त्याग पर है। जीवन में सच्चा सुख व शान्ति मांगने से नहीं, बुराई त्यागने से मिलते हैं। निम्नलिखित कई प्रकार के त्याग से हम अपने भाग्य को श्रेष्ठ बना सकते हैं –

इच्छाओं का त्याग

सुबह से लेकर रात तक मनुष्य इच्छाओं के अधीन होकर चलता है। इच्छाओं से घिरा हुआ व्यक्ति हमेशा वस्तु-वैभव, मान-सम्मान आदि के पीछे भागता रहता है। ऐसा व्यक्ति भाग्य पाता नहीं है वरन अपने ही हाथों अपने भाग्य को लकीर लगा देता है क्योंकि फल-प्राप्ति के लक्ष्य से किए गए हर कार्य में निराशा ही हाथ लगती है। हम सबको फल-प्राप्ति की इच्छा से ऊपर उठकर, इच्छा मात्रम् अविद्या की स्थिति में स्थित होकर हर कार्य करना है। इससे कार्य को जिम्मेदारी से और निष्ठावान होकर तो करेंगे परन्तु कार्य में हमारी आसक्ति नहीं होगी। फलस्वरूप जो भी परिणाम होगा उसे सहज स्वीकार कर पाएँगे एवं मन अशान्त नहीं होगा।

व्यर्थ चिंतन का त्याग

भाग्य को दुर्भाग्य में बदलने वाला महत्वपूर्ण घटक है व्यर्थ चिंतन। यह एक ऐसा विष है जो मस्तिष्क को अपाहिज बना देता है। व्यर्थ चिंतन वाला व्यक्ति, अपने कार्य के प्रति बुद्धि को समर्पित करने के बजाय पुरानी बातें सोचना, अनुमान करना, दूसरों को नीचा दिखाना, बहुत ख्वाब देखना आदि में अपना मूल्यवान समय गँवा देता है। ऐसा व्यक्ति हमेशा दूसरों से बद्दुआएँ प्राप्त करता है एवं स्वयं ही स्वयं को भाग्यहीन बना लेता है। इस प्रकार के कार्य से बुद्धि को थकावट के सिवाय कुछ नहीं प्राप्त होता है। इसलिए भाग्य बनाना है तो इस प्रकार के कर्म को त्यागना है एवं मन को लक्ष्य की तरफ मोड़ना है।

आलस्य का त्याग

श्रेष्ठ भाग्य बनाने की ताकत उसी के पास होती है जो आलस्य या अलबेलेपन नामक जीवन के महान शत्रु को मारता है। जिन लोगों का लक्ष्य बहुत उच्च है परन्तु जीवन में आलस्य छाया रहता है वे कभी सफलता प्राप्त नहीं कर पाएँगे। श्रेष्ठ भाग्य बनाने के लिए कर्मठता अनिवार्य है।

अभिमान का त्याग

दुनिया में एक प्रसिद्ध कहावत है, 'पाप मूल अभिमान' अर्थात् भाग्य को दु-भाग्य बनाने में सभी प्रकार के अभिमान जिम्मेदार हैं। जब व्यक्ति स्वयं के मूल स्वरूप को भूलकर, अपने को देह मानता है तब वह जाति, कुल, वंश, सौन्दर्य, योग्यता, दैहिक साधन आदि का अहंकार करता है। अहंकारी व्यक्ति का कर्म हमेशा विकर्म ही होता है। उसको याद ही नहीं रहता कि देह और दैहिक वस्तुएँ, देह के साथ ही पाँचों तत्वों में विलीन हो जाएँगी इसलिए श्रेष्ठ भाग्य बनाना है

तो नम्रता का कवच अवश्य पहनना है। इस गुण के होते सभी से बहुत कुछ सीखने को मिलेगा जिससे बुद्धि शुद्ध सोना बनने लगेगी। ऐसी बुद्धि द्वारा किया गया हर कर्म श्रेष्ठ ही होगा।

कुसंग का त्याग

लक्ष्य तक सफलतापूर्वक पहुँचने के लिए संग का ख्याल रखना अत्यंन्त आवश्यक है क्योंकि कुसंग से हमारे अंदर बुरी आदतें आती हैं और हमारा समय, संकल्प, शक्ति इत्यादि व्यर्थ और हानिकारक कार्य में लगने लगते हैं। लक्ष्य प्राप्ति हेतु हितकारी सुझाव अवश्य ग्रहण करें किन्तु ध्यान रखें कि किसी के नकारात्मक विचारों से खुद के मन को प्रभावित न करें। कुसंग से बचे रहने का एकमात्र सरल उपाय है ईश्वर को अपना साथी बनाकर चलें, उसी उपाय से भाग्य को श्रेष्ठ बना सकते हैं।

आधारों का त्याग

मनुष्य कई बार दूसरे व्यक्तियों के भरोसे पर, आश्वासनों पर अपने जीवन को चलाने की कोशिश करता है किन्तु जब आश्वासन झूठा सिद्ध होता है तो वह टूट जाता है, बिखर जाता है, जीवन अन्धकारमय हो जाता है। इससे मुक्त होना है तो मनुष्य को अपनी मानसिकता में बदलाव लाना बहुत जरूरी है। उनको यह समझना है कि सभी देहधारी मनुष्य अपूर्ण हैं, परिवर्तनशील हैं, अपने-अपने भाव-स्वभाव के अधीन हैं तथा अपनी ही परिस्थितियों के दलदल में फँसे हुए हैं। मनुष्यों को एक-दूसरे का सहयोग करना चाहिए किन्तु पूरी तरह से निर्भर हो जाना, पक्का आधार बना लेना, एकदम भूल है। जब तक मनुष्य अपने आप सक्षम और समर्थ नहीं होगा तब तक वह दूसरों का क्या, खुद का भी भाग्य नहीं बना सकता है।

उपरोक्त सभी प्रकार के त्याग जीवन में सहज धारण करने के लिए मनुष्य को ईश्वर पर भरोसा करना होगा तथा राजयोग को आधार बनाना होगा तब ईश्वर की शक्ति की किरणों से हर प्रकार की बुराई को त्यागने में समर्थ हो जाएँगे। ■■■

भाई-बहन के सच्चे प्यार की राखी

ब्र.कु. निर्विकार श्रीवास्तव, मिश्रिख तीर्थ (उ.प्र.)

भाई-बहन के सच्चे प्यार की, मर्यादा की राखी है।
संगम से यह प्रथा चली है, बीत गई बहुसाखी है।।
पवित्रता की राखी भइया, तेरे हाथ में बाँधूँगी।
दान-विकारों का तुम दे दो और नहीं कुछ माँगूँगी।।
करके प्रतिज्ञा दान है देना, लाना नहीं उदासी है।
भाई-बहन के सच्चे प्यार की, मर्यादा की राखी है।।

आत्म-स्मृति का तिलक करूँगी, यही तुम्हारा रूप है।
अपने को जब भूल गये तो कैसा बना स्वरूप है।।
एक पिता के तुम बच्चे हो, करना नहीं गुस्ताख़ी है।
भाई-बहन के सच्चे प्यार की, मर्यादा की राखी है।।

बहन अकेली नहीं समझना, सब बहनों के भाई हो।
दृष्टि-वृत्ति पावन रखना, तुमको लाख दुहाई हो।।
दे वचन, नहीं ठुकराना, वरना जम की फाँसी है।
भाई-बहन के सच्चे प्यार की, मर्यादा की राखी है।।

सतयुग से त्रेता तक रहता, पवित्रता का नाता है।
द्वापर से है हुई गिरावट, देहभान जब आता है।।
भक्ति खूब की है शिव की, खाई कलवट काशी है।
भाई-बहन के सच्चे प्यार की, मर्यादा की राखी है।।

अन्त समय शिवबाबा आकर ज्ञान की ज्योति जगाते हैं।
नर्कमयी दुनिया को हटाकर, स्वर्गिक सृष्टि रचाते हैं।।
ज्ञान सुनाने धरा पे आते, जो परमधाम के वासी हैं।
भाई-बहन के सच्चे प्यार की, मर्यादा की राखी है।।

पवित्रता की करके प्रतिज्ञा, बंधन यही निभाना है।
मनमनाभव का मंत्र याद कर, स्वर्ग देव-पद पाना है।।
कलियुग से सतयुग जाने की यही एक बैसाखी है।
भाई-बहन के सच्चे प्यार की, मर्यादा की राखी है।।

उमंग-उत्साह की धनी दादी जी

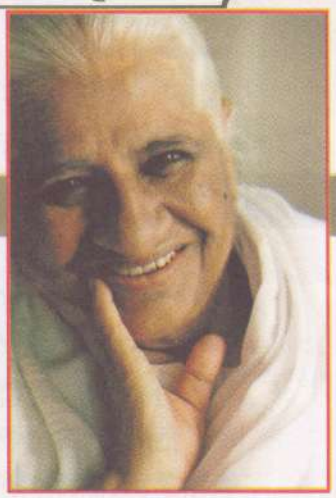

ब्रह्माकुमार श्याम भाई, शान्तिवन (आर्ट डिपार्टमेंट)

जब हम पहली बार मधुबन यज्ञ में आए और पाण्डव भवन में पैर रखा तो ऐसा आभास हुआ कि कोलाहल और भौतिकवादी चकाचौंध भरी दुनिया से आध्यात्मिकता के शान्त वातावरण में दिल को छू देने वाली शान्ति के बीच आ पहुँचे हैं।

मधुबन में रहने वाले हर एक के चेहरे पर रूहानियत की मुस्कान और आध्यात्मिक तेज स्वाभाविक रूप से टपक रहा था। ऐसे वातावरण को देखकर मैंने मन ही मन सोचा कि जीवन है तो यही है और दृढ़ निश्चय के साथ सन् 1971 में मधुबन सेवा में समर्पित हो गया। उस समय दादी प्रकाशमणि जी, दीदी मनमोहिनी जी, अन्य वरिष्ठ दादियाँ तथा वरिष्ठ भाई पाण्डव भवन में ही रहते थे।

मैं आयु में काफी छोटा था.इसलिए दादी जी तथा भ्रातागण मेरी राजी-खुशी पूछते रहते थे। उन दिनों हर एक को कई प्रकार की सेवायें करनी पड़ती थी। हर एक अपनी सेवा को बहुत-बहुत खुशी से, भगवान का घर समझकर सम्पन्न करता था। उस समय बाहरी कारोबार की सभी बातें दादी जी से ही पूछी जाती थी। यज्ञ सेवा अर्थ मुझे दिन में एक-दो बार दादी अवश्य बुलाती थी। फिर दादी जी जो भी सेवा देती थी उसे मैं बड़े ही उमंग-उत्साह एवम् अक्यूरेसी से करता था।

सफाई पर ध्यान

दादी जी हर डिपार्टमेंट के स्टाफ का सफाई पर पूरा-पूरा ध्यान खिंचवाती थी और कहती थी कि बाबा की सिजन समीप आ रही है, बाबा के बच्चे आयेंगे अत: डिपार्टमेंट में किसी भी चीज की कमी नहीं होनी चाहिए, जिससे आने वालों को तकलीफ हो। दादी जी स्वयं डिपार्टमेंट में चक्कर लगाने भी आती थी।

अपनेपन का अहसास

यज्ञ में सफाई विभाग, निर्माण विभाग तथा अन्य विभागों में मजदूर कार्य करते थे। उन्हें दादी जी सर्दी में गरम कपड़े और त्योहारों के दिनों में विशेष टोली आदि देती थी। उनके साथ में बच्चे यदि होते थे तो दादी जी बड़े प्यार से अपने पास बुलाकर उन्हें भी टोली तथा कपड़े आदि देती थी। बच्चों को प्यार करते देख उन्हों के माँ-बाप गद्गद् हो जाते थे। दादी जी के लिए उन्हों के दिल से दुआएँ निकलती थीं। दादी जी उमंग-उत्साह की धनी थी, हर एक में उमंग-उत्साह भर देती थी। जब विधिवत् आर्ट डिपार्टमेंट की शुरूआत यज्ञ में हो गई तो दादी जी चक्कर लगाने जरूर आती थी। उस समय बाबा के भवनों के नाम, उनके लिए स्लोगन, मेलों के चित्र आदि हम बनाते थे। जब विंग की सेवाएँ शुरू हुईं तो पहली प्रदर्शनी कैनवास पर ग्राम विकास की बनाई। दादी जी पेन्टिंग (चित्रों) आदि को देखकर बहुत खुश होती थी।

खुशमिजाज जीवन

दादी जी बहुत खुशमिजाज थी। हमेशा चाहती थी कि कुछ नया होना चाहिए, चाहे सेवा के क्षेत्र में, चाहे मनोरंजन में। जब पहली बरसात होती थी तो दादी जी कहती थी, आज पकौड़ों की पिकनिक होनी चाहिए। फिर दादी जी भोली दादी जी को कहकर वैरायटी पकौड़े बनवाती थी और गरमागरम पकौड़े सभी को दिये जाते थे। दादी जी कहती थी, हम सूखे संन्यासी थोड़े ही हैं, यह हमारा ईश्वरीय परिवार है। परिवार में रहते हर एक मौसम का आनंद उठाना चाहिए। इस प्रकार दादी जी सभी में उमंग-उत्साह भरती थी तथा पारिवारिक प्यार का अनुभव भी कराती थी। ■■■

राजयोग और सामाजिक स्वास्थ्य

■■■ डॉ.दिलीप व.कौडिल्य, एम.डी., आनन्द नगर (ठाणे)

करीब दस विभिन्न पंथों के अनुभव के बाद अब अचल, अडिग और अटल निश्चय हो गया है कि शिवबाबा का राजयोग ही सर्वोच्च है, सबसे श्रेष्ठ है। जिसको सारी दुनिया बीस नाखूनों का जोर लगाकर ढूँढ़ रही है, उसी परमेश्वर ने हमको ढूँढ़कर अपना बना लिया है। विशेष बात यह है कि सब आत्माओं का परमपिता, परमशिक्षक और परम सद्गतिदाता, मुझ आत्मा से मिलने के लिए, मुझे रोज नयी-नयी सीख व श्रीमत देने के लिए और मुझसे बातें करने के लिए सबसे दूर परमधाम से आता है। पिछले 21 वर्षों में ऐसे अनेक अनुभव हुए जिन्होंने स्पष्ट कर दिया कि मुरली से प्राप्त परमात्मा के महावाक्य हमारी सभी समस्याओं का निवारण करते हैं और हमारी कमी-कमजोरी को स्पष्ट रूप से महसूस करा कर उसे दूर करने की सहज विधि बतलाते हैं।

मन्दिर से बाहर आते ही नकारात्मकता का चक्र

अज्ञान अंधेरे में, भक्ति में जब मैं भटक रहा था तब रास्ते में जो भी सिंदूर का लेप लिये पत्थर दिखता, उसको बड़ी श्रद्धा और भावना से नमस्कार करता था। मन में हरदम एक मिथ्या भय था कि कहीं यह भगवान मुझसे नाराज न हो जाये। बचपन से माता-पिता और शास्त्रों ने यह भाव अतिशय दृढ़ कर दिया था कि भगवान सर्वव्यापी है। इस्कॉन नामक जगव्यापी संस्था में करीब पाँच साल बिताये। उस समय मेरा कर्मभोग बहुत जोरों पर था। मंदिर में प्रवेश करते ही अपार शान्ति मिलती थी। बाहर आते ही नकारात्मक और घातक विचारधारा का चक्र शुरू हो जाता था। प्रश्नों की क्यू निर्माण हो जाती थी कि क्या मैं इतना पापी हूँ कि मेरा प्रारब्ध मुझे सिर्फ दुख ही देगा? क्या मन की इन यातनाओं का कोई अन्त नहीं? क्या पूरा जीवन ऐसी मानहानि सहता रहूँगा? बचपन से साईं बाबा की भक्ति कर रहा था। इस भक्ति ने सब प्रकार के संकटों से बचाया था। यह अमोघ भक्ति अब फेल हो रही थी। रात को चिंता-चक्र शुरू हो जाता और आधी रात तक नींद नहीं आती थी। इसी में सात असाध्य रोगों का शिकार हो गया।

असाध्य रोग हो गए भस्म

एक दिन साक्षात्कार हुआ और भक्ति का फल राजयोग प्राप्त हुआ। मुरलीधर की मुरली से सब प्रश्नों की क्यू समाप्त हो गई। ऐसा प्रतीत हुआ मानो साक्षात् परमेश्वर ने ज्ञान अंजन डालकर दिव्य चक्षु खोल दिये। स्पष्ट रूप से समझ में आ गया कि 'भगवद् गीता के भगवान श्रीकृष्ण नहीं अपितु शिव परमात्मा हैं। भगवान सर्वव्यापी नहीं हैं बल्कि हम सब आत्माओं के साथ परमधाम में निवास करते हैं।' यह भी पता चला कि सिर्फ संगमयुग में भगवान का अवतरण भारत में ही होता है इसलिए भारत अविनाशी खण्ड है, यह कभी भी पानी में नहीं डूबता। इस महावाक्य ने मेरा एक बहुत बड़ा भय – 'पानी में डूब मरने का' समाप्त कर दिया। भगवान शिव ने समझाया है कि हम आत्माएँ मेहमान पार्टधारी हैं। अपने कर्मों के अनुसार प्रारब्ध और शरीर रूपी वस्त्र धारण करते हैं। बिन्दु रूप आत्मा का पार्ट अविनाशी रेकॉर्ड के रूप में उसी में नूँधा हुआ है। श्रेष्ठ कर्मों से ही श्रेष्ठ प्रारब्ध प्राप्त होती है और अच्छा जीवन मिलता है। हम सब पर विकर्मों का कई जन्मों का बोझ है जो भोगकर समाप्त होता है या फिर योगाग्नि से भस्म किया जा सकता है। सात असाध्य रोग इसी प्रकार भस्म हो गये।

सामाजिक अस्वास्थ्य के तीन कारण

विश्व स्वास्थ्य संघ (W.H.O.) द्वारा सन् 1998 में सम्पूर्ण स्वास्थ्य की परिभाषा में प्रथमत: यह स्पष्ट किया गया कि शारीरिक स्वास्थ्य का पूरा दारोमदार

मानसिक, भावनात्मक, सामाजिक, नैतिक और आध्यात्मिक स्वास्थ्य पर होता है। कलियुग का अन्त है इसलिए विकल्प, विकार, वासना और विक्षेप पूरे जोर-शोर से मानसिक स्वास्थ्य बिगाड़ रहे हैं। परिणामस्वरूप, सामाजिक स्वास्थ्य और सामाजिक संतुलन पूर्ण रूप से बिगड़ गया है। तीन मुख्य कारण हैं जो सामाजिक स्वास्थ्य को धराशायी कर रहे हैं। काम वासना अपने विकराल स्वरूप में पेश हो रही है। मदिरापान हद से अधिक हो रहा है। विकृत मानसिकता के कारण मदिरापान करना आधुनिकता का लक्षण बन गया है। मतलब निशाना और नशा गलत बातों का है। धूम्रपान का व्यसन भी अत्यधिक बढ़ गया है। सिगरेट और तम्बाकू के डिब्बों पर कैन्सर के भयानक चित्र होते हैं लेकिन आधुनिक मनुष्य उनको देखकर भी अनदेखा कर देता है।

लोभ विकार है चरम पर

व्यक्तिगत स्तर पर लोभ चरम सीमा पर है ही परन्तु सरकार भी लोभ के विकार से ग्रसित है। कठोर नियम तैयार कर और इन नियमों का उल्लंघन करने पर कठोर दण्ड देने की व्यवस्था कर के सरकार शराब, सिगरेट और तम्बाकू के व्यवसाय को नियंत्रण में आसानी से ला सकती है। मगर यह होता नहीं है। शराब और तम्बाकू के प्रचण्ड व्यवसायों से मिलने वाली असीमित धनराशी का लोभ सरकार की सोच को सीमित कर देता है। फिर जनहित के लिए हम कुछ कर रहे हैं, यह बताने के लिए दारूबन्दी के दिवस और क्षेत्र निर्धारित कर दिए जाते हैं। इन विशिष्ट दिनों पर या विशिष्ट क्षेत्रों में दुगने दामों से शराब उपलब्ध भी करा दी जाती है। पुलिस और प्रशासन के बंदों को भी असीमित और अनियंत्रित धनराशी कमाने का एक स्त्रोत निर्माण हो जाता है। गरीब लोग सस्ती और विषैली देशी शराब पीकर आँखें और जान दोनों ही खो देते हैं। जनता का मोर्चा और कुछ नेताओं की भाषणबाजी के बाद फिर से मूल व्यवस्था कार्य करने लगती है।

राजयोग से बढ़ जाती है मन की शक्ति

शिव परमात्मा बतलाते हैं कि आत्मा की शक्ति प्रायःलोप हो गई है। चंचल मन व्यसन और प्रलोभनों के पीछे निरंतर भागता रहता है। प्रखर मनोनिग्रह समाप्त हो गया है इसलिए माया का काम आसान हो गया है। परम दयालु परमात्मा राजयोग की विधि बतलाते हैं जिससे मन की शक्ति असीमित प्रमाण में बढ़ जाती है। यह मन की शक्ति मनुष्य को प्रथम मनजीत बनाती है। फिर मनुष्य मायाजीत और जगतजीत बन जाता है। अनपढ़ और गरीब बच्चे, शिवबाबा की इन बातों को झट मान लेते हैं और स्वयं की प्रगति के लिए तुरन्त श्रीमत प्रमाण पुरुषार्थ आरंभ कर देते हैं। मगर शिक्षित, अमीर और सुखी नजर आने वाले व्यक्तियों को विज्ञान का घमण्ड होता है। अभिमानी होने के कारण खुद को आत्मा नहीं समझते। अपने परमपिता की पहचान न होने के कारण अनाथ होते हैं। परमात्मा के अस्तित्व और शान्ति की शक्ति को नहीं मानते। पूछते हैं – 'इस बारे में विज्ञान क्या कहता है?' आधुनिक मानव की इस कमजोरी को दूर करने के लिए परमात्मा ने माइण्ड-बॉडी मेडिसिन या स्प्रिचुअल मेडिसिन का आविष्कार कर दिया है।

मस्तिष्क में निर्मित संजीवनी स्त्राव

डॉ.हर्बट बेन्सन नामक अमेरिकन हार्ट स्पेशलिस्ट ने एक अनोखा प्रयोग किया। अपने रोगियों को एक पॉलीग्राफ मशीन से जोड़ा। इन सब रोगियों की एक खासियत थी। अत्याधुनिक दवाइयों के बावजूद भी उनके रक्तदाब में खास बदलाव नहीं आ रहा था। सबको बताया गया कि एक से लेकर 1000 तक गिनती करें। एक विचित्र परिणाम दिखाई दिया। इन सब रुग्णों के सब पैरामीटर जो पहले से ही अधिक थे, प्रत्येक गिनती के साथ बढ़ते गये। यही प्रयोग एक दूसरी विधि के साथ दोहराया गया। प्रत्येक व्यक्ति के हाथ में एक जपमाला दे दी गई और कहा

शेष भाग पृष्ठ 32 पर

नरसिंहपुर- विश्व पर्यावरण दिवस पर वृक्षारोपण करते हुए मनरेगा विभाग के महाप्रबंधक भ्राता आर.सी. पाटले तथा ब्र.कु. कुसुम बहन।

अलीराजपुर- वृक्षारोपण करते हुए बैंक मैनेजर भ्राता नारायण वर्मा, ब्र.कु. माधुरी बहन तथा अन्य।

महेश्वर : विष्णु हॉस्पिटल में डॉ. हेमंत सोनी, डॉ. मदनलाल सोनी और डॉ. गुप्ता को ईश्वरीय सौगात देती हुई ब्र.कु. अनिता बहन।

थाने (वेस्ट श्रीनगर)- हैंगिंग गार्डन में वृक्षारोपण करते हुए ब्र.कु प्रमिला बहन, ब्र.कु मनीषा बहन, ब्र.कु सीता बहन, समाजसेवी भ्राता हरीश तथा उनके साथी।

पुणे (धनकवडी)- माहेश्वरी ग्रुप के बोर्ड ऑफ डायरेक्टर भ्राता नीलेश लखोटिया तथा किशोर कुमार भंसाली, ब्र.कु. सुलभा बहन को तुलसी का पौधा भेंट करते हुए।

अमरेली- पर्यावरण दिवस पर ओमशांति गार्डन में वृक्षारोपण करते हुए मैनेजर भ्राता अल्पेश, डिप्टी मैनेजर भ्राता सुधीर, ब्र.कु गीता बहन तथा अन्य।

गांधीधाम (भारत नगर)- योग टीचर भ्राता राजेश पटेल तथा योग टीचर हिना बहन पटेल को ईश्वरीय सौगात देते हुए ब्र.कु. सरिता बहन।

छतरपुर- विश्व पर्यावरण दिवस के उपलक्ष्य में वृक्षारोपण करते हुए ब्र.कु. रीना बहन, ब्र.कु. भारती बहन तथा अन्य भाई-बहनें।

भीकनगांव- वृक्षारोपण करते हुए विधायक बहन झुमा सोलंकी, वरिष्ठ योगेश भाई एवं वन विभाग के अधिकारीगण।

सारंगपुर- अंतर्राष्ट्रीय योग दिवस का शुभारंभ करते हुए अनुसूचित जाति के प्रांतीय उपाध्यक्ष भ्राता गौतम टेटवाल, राज्य कर्मचारी संघ के जिला अध्यक्ष भ्राता धर्मेंद्र वर्मा, व्यापारी भ्राता नरेंद्र मकोडिया, ब्र.कु. भाग्यलक्ष्मी बहन तथा ब्र.कु. प्रीति बहन।

इंदौर (प्रेम नगर)- अंतर्राष्ट्रीय योग दिवस कार्यक्रम के बाद मंच पर उपस्थित हैं पार्षद एस. मंगवानी, भारतीय सिंधु प्रदेश अध्यक्ष भ्राता गुलाब ठाकुर, वार्ड संयोजक भ्राता योगेश गुप्ता, ब्र.कु. शशि बहन तथा अन्य।

मैनपाट-अंबिकापुर- आध्यात्मिक स्नेहमिलन के बाद समूह चित्र में हैं ब्र.कु विद्याबहन, जेल अधीक्षक भ्राता राजेंद्र गायकवाड़, बहन सरोज गायकवाड़ तथा अन्य भाई-बहनें।

राजनांदगांव- वृक्षारोपण के पश्चात् पार्षद भ्राता गगन आईच, पार्षद भ्राता शिव वर्मा, पार्षद बहन सुनीता फडणवीस, ब्र.कु. पुष्पा बहन एवम् अन्य ब्र.कु. बहनें समूह चित्र में।

पन्ना- विश्व पर्यावरण दिवस पर जिला अस्पताल में वृक्षारोपण करने से पहले ब्र.कु. सीता बहन, डॉ. एल.के. तिवारी, डॉ. आलोक गुप्ता तथा अन्य समूह चित्र में।

रानीपरतेवा- विश्व पर्यावरण दिवस पर पौधारोपण करते हुए ब्र.कु. सुमन बहन, ब्र.कु. प्रभा बहन, जनपद सदस्य भ्राता प्रहलाद यदु, सरपंच भ्राता हेमलाल नेताम, ग्राम पटेल भ्राता साधुराम निषाद एवं अन्य।

धमतरी- विश्व पर्यावरण दिवस पर पौधारोपण करते हुए ब्र.कु. सरिता बहन तथा अन्य साथी बहनें।

राजयोग और सामाजिक स्वास्थ्य

पृष्ठ 29 का शेष भाग

गया कि 1000 तक गिनती तो अवश्य करनी है लेकिन हर अंक के साथ 'वन-वन' की ध्वनि माला फेरते हुए करनी है। इस प्रयोग के अन्त में एक चमत्कार नजर आया। सभी रुग्णों के सभी पैरामीटर नॉर्मल से भी नीचे आ गये थे। डॉ.हर्बट बेन्सन ने इस शारीरिक शिथिलता को बी.आर.आर. (Biological Relaxation Responce) नाम दिया। मन एकाग्रचित्त और पूर्ण रूप से शिथिल हो गया। सबने सत्चित्आनन्द अवस्था को अनुभव किया। इसका कारण है – मस्तिष्क में निर्मित संजीवनी स्राव, जो शरीर की पेशी-पेशी में संचारित होकर अनोखा नव-निर्माण करता है। बी.के. मेडिकल विंग और बी.के.स्पार्क विंग के पास कुछ ऐसे अनोखे यन्त्र हैं जो राजयोग से प्राप्त, चैतन्य शक्ति की श्रेष्ठ और शक्तिशाली स्थिति दर्शाते हैं।

डॉ.बेन्सन के प्रयोग में 'वन-वन' की ध्वनि लधु ओंकार चैन्टिंग के समान है। डॉ.हर्बट बेन्सन ने अपने प्रयोग से तीन निष्कर्ष निकाले – 1.जीवन में गिनती करते जायेंगे तो शीघ्र मृत्यु को पायेंगे, 2.चाहे 'वन-वन' कहें या ओम चैंट करें या 'हरे कृष्ण' महामंत्र का जप करें, बी.आर.आर. अवश्य प्राप्त होता है, 3.कॉन्शियसनेस की यह शक्तिशाली और श्रेष्ठ अवस्था प्रयोग के उपरान्त टिक नहीं पाती।

रिवार्ड सेन्टर और पनिशिंग सेन्टर

परम शिक्षक शिव परमात्मा कर्मों की गुह्य गति बतलाते हैं। जैसे कर्म आप करेंगे, वैसा फल आपको मिलेगा। बिन्दुशास्त्र बतलाता है कि हमारे मस्तिष्क में दो बिन्दु हैं, जो कर्मों के सिद्धांत को स्पष्ट करते हैं। रिवार्ड सेन्टर अच्छे कर्मों को करने पर उद्दीप्त होता है और सत्चित्आनन्द (Feel Good Hormonce) देने वाले स्राव निर्माण करता है। लेकिन, जब हम कोई गलत काम करते हैं तो पनिशिंग सेन्टर उद्दीप्त हो जाता है। इससे निर्माण होने वाले स्राव, सोमेटिक जिन्स को कार्यान्वित करते हैं जिनसे मधुमेह, रक्तदाब, डिप्रेशन, हार्टअटैक और कैन्सर जैसे भयानक रोग प्रकट हो जाते हैं।

नकारात्मक संकल्प ही शैतान हैं

सन् 1994 तक, पीनियल ग्रंथी का काम क्या है, मालूम नहीं था। अब डॉक्टर्स मानने लगे हैं कि आत्मा इस ग्रंथी पर वास करती है। यह ग्रंथी भृकुटि के मध्य से, पीछे की तरफ खिंची रेखा पर स्थित है। इस ग्रंथी की रचना मनुष्य की आँख के समान होती है। ग्रीक, इजिप्टियन और हिन्दू आध्यात्मिक प्रणाली में इस ग्रंथी का उल्लेख गॉड्स एन्टीना के नाम से किया जाता है। ऐसी मान्यता है कि मसीहा परमेश्वर से प्राप्त प्रकम्पन रूपी संदेशों को, इस ग्रंथी के माध्यम से फोटोज में परिवर्तित करता है। रशियन वैज्ञानिकों का 'फराडे केन प्रयोग' यह सिद्ध करता है कि हमारे संकल्प असीमित दूरी तक अपना प्रभाव दिखा सकते हैं। सकारात्मक संकल्प प्राण शक्ति को बढ़ाते और असाध्य रोगों को ठीक कर देते हैं। नकारात्मक संकल्प ही शैतान हैं, जो सब प्रकार के स्वास्थ्य को खतम कर देते हैं। व्याधियों के दो प्रमुख कारण हैं – 1.दिल (मन) है कि मानता नहीं और 2.ये दिल मांगे मोर। डॉ.रोजर रूपेरी बताते हैं कि हमारे दो मन होते हैं – 1.वैज्ञानिक मन और 2.आध्यात्मिक मन। वैज्ञानिक मन शैतान का घर होता है। राजयोग के नियमित और विधिपूर्वक प्रयोग द्वारा इस शैतानी मन में वास करने वाले वासना, विकार और विकल्प शान्त हो जाते हैं। मन की इस स्थिति को ही अन्तर् मौन कहते हैं। इस स्थिति में अतिशय प्रबल आध्यात्मिक मन कार्यान्वित हो जाता है। फिर मनुष्य के लिए असंभव बात भी एक दैवी चमत्कार की तरह संभव हो जाती है। कैन्सर जैसा दुर्धर रोग भी ठीक हो जाता है। ब्र.कु.डॉ.सतीश गुप्ता ने यह सिद्ध कर दिया कि दुर्धर हृदय रोग भी ठीक हो जाता है, बस, राजयोग पर भाव और श्रद्धा चाहिए। ■■■

'विक्रम और बेताल' का आध्यात्मिक रहस्य

ब्रह्माकुमार विपिन, वडोदरा (अटलादरा)

रमणीक एवं सरल किस्से-कहानियों द्वारा समाज को ज्ञान की सुंदर शिक्षाएं देना और लोगों की जिज्ञासाओं को सहज शांत करना भारतीय दर्शन और शिक्षा प्रणाली की बहुत बड़ी खूबी रही है। इस श्रंखला में 'विक्रम और बेताल' की कथाएं बहुत प्रसिद्ध हैं। विक्रम और बेताल वास्तव में कौन हैं, ये हमें क्या बताना चाहते हैं, आध्यात्मिक अर्थों में इस बात को यहाँ हम समझेंगे।

इन कहानियों में विक्रम को एक शूरवीर और बुद्धिमान राजा के रूप में तथा बेताल को एक प्रेत के रूप में दिखाया गया है। इस प्रेत को राजा विक्रम किसी साधु के कहने पर वश में करने की कोशिश करता है। इसी दौरान बेताल राजा को कई कहानियां सुना कर उसकी बुद्धि की परीक्षा भी लेता है और साथ-साथ धोखा देकर उसके नियंत्रण से भाग भी निकलता है।

आध्यात्मिक दृष्टि से देखा जाए तो वास्तव में यह हम लोगों की ही जीवन-कहानी है। विक्रम कोई और नहीं बल्कि हम लोगों में से वे साहसी आत्माएं हैं जो दृढ़ता की शक्ति के साथ बुराई पर विजय पाने के लिए निकल पड़ी हैं। इस कर्तव्य में बेताल अर्थात् माया हमारी परीक्षा लेती है। यहाँ बेताल शब्द का अर्थ है 'बे और ताल' अर्थात् सुर और ताल से रिक्त बातें जिनका कोई सार्थक अभिप्राय ना हो। जो लोग सुर अर्थात् सद्भाव एवं ताल अर्थात् तालमेल (सामंजस्य) के गुणों से रहित होते हैं, वे ही व्यर्थ बातें सुनाकर हमारी परीक्षा लेने के निमित्त बन जाते हैं।

कहानियों में दिखाया है कि बेताल कोई भूत अथवा प्रेत है, जो वीरान जंगल में पेड़ पर उल्टा लटका रहता है। व्यर्थ बातें भी भूतकाल के भूत और व्यर्थ स्मृतियों के प्रेत (प्रेत अर्थात् छाया जो वास्तविक नहीं है) ही तो हैं जो भ्रम मात्र हैं। जिनकी छाया ही शेष है, वास्तविकता अब कुछ भी नहीं है। ऐसी बातें मनुष्य की बुद्धि को दुखद यादों के वीरान जंगल में अशांति के वृक्ष पर उल्टा लटका देती हैं अर्थात् उसकी सोच ही विपरीत या नकारात्मक हो जाती है।

पहले बेताल विक्रम के नियंत्रण में है। तब वह विक्रम से कहता है, तुम्हारा समय गुजारने के लिए मैं तुम्हें कहानी सुनाता हूँ पर मेरी एक शर्त है, कहानी सुनकर तुम्हें कुछ बोलना नहीं है, मौन में रहना है और अगर तुम बोले तो मैं उड़ जाऊंगा। परन्तु, कहानी सुनाने के बाद कहता है कि मेरी कहानी में जो प्रश्न है उसका उत्तर दो वरना तुम्हारे सर के सौ टुकड़े हो जाएंगे और वह दोनों ही तरफ से विक्रम को फंसा लेता है। इसी प्रकार, जब हमारा मन शांत स्थिति में है, तब बाहर से बेताल की भूमिका निभाने वाली माया के निमित्त लोग चटपटे और अटपटे समाचारों की कहानियां, समय को सफल करने के नाम पर हमें सुनाने के लिए प्रस्तुत हो जाते हैं। इन कहानियों को सुनाने के बाद बेताल रूपी माया की परीक्षा यह होती है कि अब आप अपनी राय बताइए। यदि हम बताते हैं तो फंसते हैं क्योंकि हमारे जवाब का ढोल पीटे जाने और उसे तोड़े-मरोड़े जाने की पूरी सम्भावना होती है। जवाब ना देने पर मन में कोई प्रतिक्रिया देने का आवेग पैदा होता है अथवा सामने वाले के असंतुष्ट हो जाने की झिझक मन में हलचल पैदा करती है। दोनों ही स्थितियों में मन का मौन हाथ से फिसलता नजर आता है। बेताल हमारे नियंत्रण से निकल हमें अपने नियंत्रण में कर लेता है अर्थात् हमारी बुद्धि को उलझन के अंधेरे जंगल में व्यर्थ के झाड़ पर उल्टा

शेष भाग पृष्ठ 34 पर

सच की जीत

■■■ ब्रह्माकुमारी अर्पिता, त्रिपुरा

मैं आत्मा इस संगमयुग में कुमारी तन में हूँ और कॉलेज की विद्यार्थी हूँ। मैं जिस कॉलेज में पढ़ती हूँ वहाँ अन्तिम परीक्षा में, प्रैक्टिकल परीक्षा के लिए बाहर से परीक्षक आते हैं। ऐसा ही एक हमारा परीक्षक थोड़ा भ्रष्टाचारी था। उसने गुप्त रीति से विद्यार्थियों को कहा कि अगर तुम लोग मुझे हर विद्यार्थी के हिसाब से 500 रुपये दे देते हो तो मैं तुम्हें अच्छे नम्बर दे दूँगा। यह बात सुन विद्यार्थी खुश हो गये और पैसे देने के लिए तुरंत तैयार हो गये। लेकिन, मुझ आत्मा को शिवबाबा ने दादी जानकी जी के जीवन का एक उदाहरण याद करवाया और मैंने पैसे देने से इनकार कर दिया। मैंने सोचा, कुछ गलत होता है तो कोई बात नहीं, शिवबाबा हैं मेरे साथ। जब परीक्षा परिणाम आया तब मेरे मीठे बाबा का कमाल यह था कि मैं पहले नम्बर पर आई। आश्चर्य की बात यह है कि दूसरे नम्बर वाले से मैं सिर्फ एक नम्बर से ज्यादा हूँ। वह एक नम्बर उसी विषय में मिला जिसमें मैंने पैसे देकर नम्बर लेने से इनकार किया था। कुल पाँच विषयों में से चार विषयों में, दूसरे नम्बर वाली आत्मा मुझसे 2/3 नम्बर से आगे है लेकिन उस एक विषय में मैं उससे 12 नम्बर ज्यादा हूँ जिस कारण कुल जोड़ में मेरा एक नम्बर ज्यादा हो गया। यह है बाबा की श्रीमत का कमाल। इसी परिणाम के लिए मुझे 5000 रुपये पुरस्कार भी दिया जायेगा। यह है मीठे बाबा की श्रीमत की ताकत और ईमानदारी तथा सच्चाई का मीठा फल। ■■■

'विक्रम और बेताल' का आध्यात्मिक रहस्य

पृष्ठ 33 का शेष भाग

लटका देता है। फिर हम वीर विक्रम से अधीर विक्रम बन जाते हैं। इसीलिए मनमनाभव के मौन मंत्र अर्थात् सुनते हुए ना सुनना और स्वचिंतन में तल्लीन रहना ही बेताल पर विजय पाने का साधन है। इन बिना सुर-ताल की बातों रूपी बेताल पर विजय पाना अति आवश्यक भी है, तभी हमारी उन्नति संभव है। मनमनाभव, स्वचिंतन एवं अंतर्मुखता के ईश्वरीय मंत्र इस समस्या के सर्वश्रेष्ठ निदान हैं।

इसका एक दूसरा विकल्प यह भी है कि बेताल जितनी बड़ी कहानी सुना कर अपना प्रश्न पूछता है, तब उसे अच्छी भावना के साथ ज्ञानवर्धक सुविचार और सद्वाक्य निरंतर सुनाए जाएं जिससे वह या तो स्वयं जागरूक हो जाए या फिर तंग हो जाए। फिर वह हमें व्यर्थ कहानियां सुनाना छोड़ देगा। ■■■

सदस्यता शुल्क :

(भारत) वार्षिक : 120/- आजीवन : 2,000/-
(विदेश) वार्षिक - 1,000/- आजीवन - 10,000/-

शुल्क ड्राफ्ट या ई-मनीऑर्डर द्वारा भेजने हेतु पता :

'ज्ञानामृत', ज्ञानामृत भवन, शान्तिवन- 307510
(आबू रोड) राजस्थान, भारत।

For Online Subscription: Bank: State Bank of India, A/c Holder Name : Gyanamrit, A/c No: 30297656367
Branch Name : PBKIVV, Shantivan, IFSC Code: SBIN0010638

अधिक जानकारी के लिए सम्पर्क सूत्र :

Mobile: 09414006904, 09414423949, 02974-228125 Email: hindigyanamrit@gmail.com, omshantipress@bkivv.org

ब्र.कु. आत्मप्रकाश, मुख्य सम्पादक एवं प्रकाशक, ज्ञानामृत भवन, शान्तिवन, आबूरोड द्वारा सम्पादन तथा ओमशान्ति प्रिन्टिंग प्रेस, शान्तिवन-307510, आबूरोड में प्रजापिता ब्रह्माकुमारी ईश्वरीय विश्व विद्यालय के लिए छपवाया।

मुख्य सम्पादक - ब्र.कु. आत्मप्रकाश, **सम्पादक** - ब्र.कु. उर्मिला, शान्तिवन, **सह-सम्पादक** - ब्र.कु. सन्तोष, शान्तिवन

फोटो, लेख, कविता या अन्य प्रकाशन सामग्री के लिये :

E-mail : gyanamritpatrika@bkivv.org, omshantiprintingpress@gmail.com, website : gyanamrit.bkinfo.in

वडोदरा (मंगलवाड़ी)- ब्र.कु. राज बहन, न्यूज़ चैनल को इंटरव्यू देते हुए। साथ में हैं विधायक सीमा बहन।

गुवाहाटी (रूपनगर)- अंतर्राष्ट्रीय योग दिवस का शुभारंभ करते हुए पूर्व सांसद डॉ. अरुण शर्मा, आसाम फाइनेंशियल कॉरपोरेशन लि. के अध्यक्ष भ्राता विजय गुप्ता, जीएसटी आयुक्त भ्राता गौतम दास, ब्र.कु. शीला बहन तथा ब्र.कु. मौसमी बहन।

ब्रह्मपुर - अंतर्राष्ट्रीय योग दिवस पर आयोजित कार्यक्रम का शुभारंभ करने के बाद शिबवावा की याद में उपस्थित हैं इंजीनियर भ्राता सुनील राजू, आर्मी कालेज के कर्नल भ्राता गोविंद राव, उड़ीसा उच्च न्यायालय की सिविल जज बहन सरोजिनी साहू, ब्र.कु. मंजू बहन, इंजीनियर भ्राता हृषिकेश पटनायक एवं ब्र.कु. माला बहन।

कोलकाता (बारा नगर)- मातेश्वरी जगदंबा को श्रद्धांजलि अर्पित करने के बाद बंगला दूरदर्शन से भ्राता देवाशीष चटर्जी, बहन मिताली चटर्जी, आचार्य गोपाल खेत्री, ब्र.कु. किरण बहन और अन्य ईश्वरीय स्मृति में।

आस्का (उड़ीसा)- लोकडाऊन के समय स्थानीय प्रशासन के माध्यम से जरूरतमंदों को सेवाकेन्द्र से खाद्य एवं जल प्रदान करते हुए ब्र.कु. लिली बहन तथा अन्य।

राहुरी- शासकीय कोविड सेंटर के लिये अन्नदान की सेवा करते हुए ब्र.कु.नंदा बहन, ब्र.कु.मोनिका बहन, ब्र.कु. संदीप भाई, ब्र.कु. बालू भाई और ब्र.कु. निर्मला प्रधान।

RNI No.10563/1965, Postal Regd. No.RJ/SRO/9559/2021-2023
Posting at Shantivan-307510 (Abu Road) Licensed to post without prepayment No. RJ/WR/WPP/002/2021-2023. Published on 20th of each Month & Posted on 26th to 1st of each month. Price 1 copy Rs. 8.50, Issue : August, 2021.

रक्षा-बन्धन के पावन पर्व पर

दादी रत्नमोहिनी जी का

दिव्य सन्देश

विश्वरक्षक परमपिता परमात्मा शिव के स्नेह, ज्ञान, गुण और शक्तियों के कवच में सदा सुरक्षित रहने वाले सर्व भाई-बहनें;

पावन रक्षाबंधन तथा जन्माष्टमी पर्व की आप सर्व को कोटि-कोटि बधाइयाँ।

सृष्टि रंगमंच पर पार्ट बजाने वाले, विश्वपिता के हम सभी विश्वभर के रूहानी बच्चे आपस में भाई-भाई हैं। बेहद विश्व-परिवार से जोड़ने वाला, एक की याद द्वारा एकता की माला में पिरोने वाला, उमंग-उत्साह तथा खुशी की खुराक से निरोगी और दीर्घायु बनाने वाला यह प्यारा रक्षाबंधन हम सबके लिए अमूल्य ईश्वरीय उपहार है।

परमात्मा पिता की दिव्य शिक्षाओं का पालन करते हुए हम सब मन-वचन-कर्म और स्वप्न में भी पूर्ण पवित्रता को अपनाएं, यह इस पर्व का पावन संदेश है।

दिल की शुभकामना है कि रहमदिल बनकर, 'पवित्र भव, योगी भव' के मंत्र को याद करते हुए, दृढ़ संकल्प के साथ रक्षासूत्र को कलाई पर बांधें।

मधुर बोल की अविनाशी मिठाई एक-दो को खिलाएं और मस्तक पर आत्म-स्वरूप में टिकने का टीका लगाएं। पवित्रता, मधुरता और दृढ़ता की यह धारणा आपको सदा खुशनसीब बना देगी।

दादी रत्नमोहिनी